वर्ष - २ अंक - २०
विक्रम सवंत् २०७७ वैशाख
मई - २०२०

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित

आर्य लेखक परिषद्

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

मई 2020

वर्ष–२ अंक–२०,
विक्रम संवत् २०७७
दयानन्दाब्द– १९६
कलि संवत् – ५१२१
सृष्टि संवत –१,९६,०८,५३,१२१

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)

❖

सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)

❖

सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(८७३६९७९६३०,
९९९३९७०९४०)

❖

आकल्पन
प्रवीण कुमार (महाराष्ट्र)

❖

सम्पादकीय कार्यालय
ए–११,त्यागी विहार, नांगलोई,
दिल्ली–११००४१
चलभाष– ८१७८७१०३३४

अनुक्रम

विषय

१ स्वदेशी (सम्पादकीय)
२ जीवन (कविता)
३ विश्व मानवता को शिक्षा देने वाल.....
४ Brahmcharya During Education
५ शान्ति
६ कर्त्तव्याकर्त्तव्य
७ एकता का साधन
८ महर्षि दयानन्द का यज्ञ.....
९ विद्वानों का संग
१० हमको अभी दूर तक चलना है (कविता)
११ देश को इसी राह पर चलने की जरूरत है
१२ महाराणा प्रताप के पूर्वजों की शौर्यगाथा
१३ माता (कविता)
१४ महात्मा बुद्ध और वैदिक कर्मफल व्यवस्था
१५ कोरोना और भारत

ईमेल – aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट https://aryalekhakparishad.com/
फेसबुक – आर्य लेखक परिषद्

Digital

सम्पादकीय

स्वदेशी

कभी हमारे क्रान्तिकारी वीर गाया करते थे–

जिएं तो बदन पर स्वदेशी वसन हो।
मरें तो बदन पर स्वदेशी कफन हो।।

और स्वदेश के आदर में कहा जाता था–

नहीं है आरजू कोई, है आरजू तो ये।
रख दे कोई जरा सी खाके वतन कफन में।।

एक कविता की दो पंक्तियां बहुत प्रचलित थीं–

जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है, पत्थर है जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।

एक और पद्य था जो मुझे उन दिनों पाठ्य पुस्तकों में प्रायः देखने को मिलता था जो मातृभूमि के आदर में लिखा गया था –

जिस की रज में लोट–लोट कर बड़े हुए हैं।
घुटनों के बल सरक–सरक कर खड़े हुए हैं।।

इसके आगे स्मरण नहीं रहा। कविवर प्रकाश जी ने इसी भाव को कुछ इस तरह व्यक्त किया था –

जिस मातृभूमि की अरे तू गोद में पला।
धूली में जिसकी लोट कर घुटनों के बल चला।।
उसके फटे आंचल को तू सीने की बात कर।
मर्दों की तरह दुनिया में जीने की बात कर।।

यह उन दिनों की बात है जब हमारा देश परतंत्र था, गुलाम था। किसी विदेशी सत्ता का उपनिवेश था। विदेशी शासक बलात् हमारे स्व को कुचल कर अपना स्व प्रतिष्ठित करने में लगे हुए थे। आज कहने को हम स्वतंत्र हैं परन्तु हमारा तंत्र अभी तक हमारे स्व को प्रतिष्ठा प्रदान नहीं कर सका।

अब यह है स्वदेशी शब्द तो है परन्तु इसमें वह भाव नहीं रहा जो क्रान्ति वीरों का था। अब यह क्रांतिवीरों का स्वदेशी न रहकर मुनाफाखोरों का स्वदेशी हो गया है। एक दिन मुझे रास्ते में अखबार से काटा गया एक छोटा सा कागज का टुकड़ा मिला। उसमें लिखा था–*"पहले देश गुलाम था तब बकरे शेफील्ड की छुरी से काटे जाते थे। फिर आया स्वराज्य तो यह तय हुआ कि अब बकरे शेफील्ड की छुरी से नहीं काटे जाएंगे, अलीगढ़ की छुरी से काटे जाएंगे। जब कसाई बकरे को अलीगढ़ की छुरी से काटने लगा तो बकरा चिल्लाया। कसाई ने कहा अबे, क्यों चिल्ला रहा है अब तो तू स्वदेशी छुरी से काटा जा रहा है।"*

आज स्वदेशी शब्द में यही भाव निहित है। शब्द तो स्वदेशी है परन्तु भाव विदेशी है, विधर्मी है। इसी स्वदेशी की आड़ लेकर मुनाफाखोर और उनके क्रीतदास राजनीतिबाज लोग स्वदेशी भाव भरे आचार विचार, रहन–सहन का सर्वनाश करते हुए आमजन का सर्वस्वहरण करने में लगे हुए हैं। बड़ी बेरहमी से खूंखार दरिंदों की तरह प्रजा पीड़न कर रहे हैं। अतः एक बार पुनः देशवासियों के समक्ष इन स्वदेशी साम्राज्यवादियों से संघर्ष करके अपने स्व को मुक्ति दिलाने का अवसर आ उपस्थित हुआ है। अन्यथा पराधीनता की हथकड़ी बेड़ियों की जकड़न और हंटर की मार सहने के लिए तैयार हो जाओ जो तुम्हें भारतीय संस्कृति और स्वदेशी के नाम पर झेलनी पड़ेगी।

आज तो स्वदेश के स्व पर ही विवाद उठ खड़ा हुआ है। हिंदू कहता है यह देश सिर्फ मेरा है। दलित कहता है मैं ही इसका मूल निवासी हूं इसलिए यह सिर्फ मेरा है। मुसलमान कहता है कि यह मेरा और सिर्फ मेरा है। सिख कहता है यह केवल खालसा का है और किसी का नहीं। बौद्ध कहता है हम सम्राट अशोक के वारिस हैं यह देश सिर्फ बौद्धों का है। ईसाई कहते हैं कि यह सिर्फ ईसाईयों का है।

यद्यपि वर्तमान में उपस्थित संकटकाल में लोग संविधान की दुहाई देते हुए कहने लगे हैं कि हम भारत के लोग यह देश हम सबका है। परन्तु यह केवल अवसरवादी ढकोसला है। वास्तव में यह सब लोग मजहबी निजाम के समर्थक हैं। इनमें से जो भी सशक्त और सबल हो जाएगा वह सिर्फ अपना मजहबी निजाम कायम करेगा। अपनों के अलावा बाकी सबको गुलाम बनाकर रखेगा। अपने समक्ष अन्य को सहन नहीं करेगा। इनमें से कोई भी केवल मनुष्य बनकर मित्र बनकर भाई और कुटुम्बी बनकर नहीं रहना चाहता, मजहबी बनकर रहना चाहता है परन्तु मजहब

और इंसानियत एक साथ कभी नहीं रह सकते। पाखंड और समाज एक साथ नहीं रह सकते। हां, इंसानियत का ढोंग मजहबों में जरूर देखने को मिलेगा, कहीं कम कहीं ज्यादा।

अब देखिए हम कितने स्वदेशी हैं। सर्वप्रथम मनके आंतरिक भावों को व्यक्त करने का साधन जो भाषा है क्या वह स्वदेशी है? क्या इस देश की ऐसी कोई एक भाषा है जिसे हम सब अपनी कह सकें? क्या हमारी कोई स्वदेशी राष्ट्रभाषा है? नहीं है तो चुल्लू भर जल में डूब कर मर जाना चाहिए इन स्वदेशी के हिमायतियोंको।

मोबाइल के फेसबुक और व्हाट्सएप पर रोमन लिपि में लिखने वालों को लज्जा नहीं आती? शिक्षा का माध्यम कौन सी स्वदेशी भाषा है? उच्चतम न्यायालय का कार्य कौन सी स्वदेशी भाषा में हो रहा है? आजादी के 70 साल के बाद तक भी हम देश की अपनी एक भाषा तक नहीं बना सके। सत्ताधारी नालायक नेता लोग आज भी अंग्रेजी को देशवासियों पर जबरन लादने में लगे हुए हैं।

अब चिकित्सा के क्षेत्र पर दृष्टि डालिए क्या वह स्वदेशी है। चिकित्सा के नाम पर लूटने के लिए भी अंग्रेजी भाषा को माध्यम बनाया गया है। बच्चों से बात करो तो वह कहते हैं इंग्लिश में बोलो हिंदी में हम नहीं समझते। बालकों का गिनती पहाड़ा और वर्ण उच्चारण सब विदेशी। हमारी देसी सब्जियों और फलों के नाम भी विदेशी। बालकों के जन्मदिन मनाने और बधाई देने का तरीका भी स्वदेशी नहीं है। हमारे रिश्ते के जो स्वदेशी नाम थे वह भी नहीं रहे। पिता, बाबा, दादा, ताऊ, चाचा, फूफा, मामा सब अंकल में सिमट गए हैं और मौसी, ताई, चाची, बुआ आदि सब आंटी में सिमट गईं हैं। क्या हमारी कौम को थोड़ा सा भी स्वदेशी का स्वाभिमान है? पराए बाप को अपना बाप बना लेने में ही गर्व का अनुभव करने वाले स्वदेशी का महत्व क्या जानें? सोचिए हम कितने स्वदेशी रह गए हैं।

आज स्वदेशी का तात्पर्य केवल इस देश में बनी हुई वस्तुओं के उपभोग का आग्रह मात्र है। इस पर हमारा कहना है कि देश का भूखा और निर्धन मनुष्य अपनी भूख मिटाने के लिए वही खरीदेगा जो कम से कम खर्च करके उसकी भूख मिटा सके वह स्वदेशी–विदेशी क्यों विचारेगा?

निर्धन बीमार अपनी पीड़ा मिटाने के लिए न्यूनतम मूल्य की दवा खरीदेगा चाहे वह स्वदेशी हो या विदेशी।

स्वदेशी के झंडा बरदार मुनाफाखोरों की दलाली करने वाले हैं। ये लोग विदेशी माल की निंदा करते हैं और स्वदेशी माल पर गर्व करने का प्रवचन करते रहते हैं परन्तु यदि स्वदेशी उत्पादन उत्तम और लाभदायक हैं तो किसी का दिमाग खराब नहीं है क्यों विदेशी वस्तुएं खरीदेगा?

वास्तविकता यह है कि स्वदेशी के नाम पर कूड़ा कचरा लोगों को दिया जा रहा है, वह भी बहुत ही महंगे दामों पर। इसके लिए धर्म और संस्कृति, अध्यात्म और योग की भी आड़ ली जा रही है। मुनाफाखोर, शोषक, लुटेरे साधु–संत, धर्मगुरु, योगाचार्य के रूप में देशवासियों के साथ छल कर रहे हैं। अपने भाषण प्रवचन के द्वारा बकरों को ऐसा प्रवचन करते हैं कि वह स्वदेशी छुरी से गला कटवाने में अपना अहोभाग्य समझते हैं और पहले मेरी पहले मेरी कहकर स्वेच्छा से गला कटवाने के लिए टूटे पड़ रहे हैं परन्तु यह बहुत बड़ा विश्वासघात है। इन स्वदेशी उत्पादकों के हृदय में स्वदेश के लोगों के प्रति किंचित भी दया और उपकार का भाव नहीं है इनके उत्पादन किसी विदेशी उत्पादन से कम घटिया नहीं है, ज्यादा ही होंगे। इनकी गुणवत्ता की जांच करने के पश्चात् अनेक देशों ने इन उत्पादनों के उपभोग पर प्रतिबंध लगा दिया है। विश्व बाजार की दृष्टि से भी स्वदेशी का कोई महत्व नहीं है। जब विदेशी कम्पनियां अपना उत्पादन हमारे देश में नहीं बेच पाएंगी तो हमारे देश की कम्पनियों के उत्पाद विदेशी क्यों खरीदेंगे? वह भी इनका बहिष्कार करेंगे। क्या उनके मन में स्वदेशी के प्रति आदर न होगा? अतः यह पूर्णतया अव्यावहारिक है। हां, यदि विदेशी उत्पादों की अपेक्षा इनकी गुणवत्ता अधिक और मूल्य सामान्य जन की जेब के अनुरूप होगा तो लोग अवश्य इन्हें ही खरीदेंगे अन्यथा तो विदेशी ही अपनाएंगे।

एक बार मैं राजीव दीक्षित की एक छोटी सी रैली में भाग लेने के लिए गया। वहां विदेशी उत्पादों की होली जलानी थी। मैंने समझा था कि विदेशी उत्पाद जलाए जाएंगे परन्तु वहां उत्पादों के खाली खोल और

खाली पैकेट एक ठेले में भरकर लाए गए थे और उन्हें ही जलाकर विरोध के नारे लगाए गए। मैंने उन लोगों से कहा कि आप लोग तो यही उत्पाद अपनी दुकानों में रोज बेचते हैं और यहां यह खोखे जलाने का नाटक कर रहे हैं। अपनी दुकानों से इन उत्पादों का बहिष्कार क्यों नहीं करते? मेरा ऐसा कहना उन्हें अच्छा नहीं लगा परन्तु सभी निरुत्तर थे। तब मुझे पता चल गया कि यह स्वदेशी का शगूफा भी देसी मुनाफाखोरों की एक सोची–समझी साजिश ही है। कितना अच्छा हो कि हम सब सचमुच स्वदेशी का सर्वांश में आदर करने वाले हो जाएं।

अपनी धरती अपना अंबर अपने गीत सुनाए।
अपनापन पनपे आपस में अपनों को अपनाएं।।

— ✍ वेदप्रिय शास्त्री

आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं,
तस्यार्द्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयोः।
शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते,
जीवे वारितरङ्गचञ्चलतरे
सौख्यं कुतः प्राणिनाम्।।

(भर्तृहरिकृत – वैराग्यशतक, श्लोक ९४)

व्याख्या — सामान्य रूप से मनुष्य की आयु सौ वर्ष की मानी गई है। इसका आधा भाग अर्थात् पचास वर्ष तो सोने में ही चले जाते हैं। शेष बचा आधे का आधा भाग अर्थात् पच्चीस वर्ष, वह बाल्यावस्था और वृद्धावस्था में बीत जाता है। शेष पच्चीस वर्ष का समय रोग, वियोग, आजीविका, बच्चों के लालन–पालन आदि दुःखों में बीत जाता है। जल की चंचल तरंगों के समान जीवन में मनुष्य को सुख कहाँ है? सुख तो ईश्वरोपासना में ही है।

जीवन

कर्त्तव्यों के पावन पथ पर, बढ़ते जाना ही जीवन है।
चट्टानों से चोटें खाकर भी, मुस्काना ही जीवन है।।
घनीभूत नैराश्य घटाओं की, भीषण अन्धियारी में,
मोह निशा, अज्ञान तिमिर के, कर्कश स्वर भयकारी में।
स्नेह न हो तो, रक्तबिन्दु भर, दीप जलाना ही जीवन है।।१।।

सुख– दुःख की छाया से बचकर, हानि– लाभ से ऊपर उठकर,
हार– जीत दोनों को सम कर, भव संगर में दुष्टदलन कर।
सत्य धर्म की बलिवेदी पर, शीश कटाना ही जीवन है।।२।।

यौवन के मदमस्त प्रलोभन, कहीं पथच्युत तुम्हें न कर दें,
चान्दी– सोने के चमकीले खण्ड, नपुंसक भाव न भर दें।
मुख्य लक्ष्य में बाधक वैभव को, ठुकराना ही जीवन है।।३।।

पथ पर बढ़ते चरण कदाचित, यदि प्रेयसि का प्रणय पकड़ ले,
मोहक ममता की जंजीरों में, यदि कोई तुम्हें जकड़ ले।
मुक्ति हेतु अति मधुर सरस,तब बात बनाना ही जीवन है।।४।।

संस्कृति भक्षक, समाज शोषक, दानवता के पुत्र यही हैं,
देश धर्म के,शिव सुकर्म के, मानवता के शत्रु यही हैं।
एक– एक चुन करके इनको, मार मिटाना ही जीवन है।।५।।

संघर्षों, झंझावातों में, सुमन अनेक यहां मुरझाते,
भव के बीहड़ वन में फंसकर, अनगिन साथी राह न पाते।
सदा "वेदप्रिय" पथभ्रष्टों को, राह दिखाना ही जीवन है।।६।।

— वेदप्रिय शास्त्री

विश्व मानवता को शिक्षा देने वाले आर्यावर्त को क्या हो गया है?

– ✍ अखिलेश आर्येन्दु

आचरण की उच्चता, उत्तमता और श्रेष्ठता मनुष्य को उसकी पहचान दिलाती है। किस कोटि का मनुष्य है, यह उसके आचरण से पता चलता है। एक समय था। आर्यावर्त भारत के प्रत्येक व्यक्ति का आचरण उच्च कोटि का हुआ करता था। तभी कहा गया – ***स्वं स्वं आचरेण शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।*** विचारणीय प्रश्न है जिस आर्यावर्त या भारतवासी विश्व मानवता को शिक्षा दिया करते थे, विज्ञान बताया करते थे, साहित्य समझाया करते थे, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को बताकर लोगों को सभ्य होने का संदेश देते थे, उस भारतवर्ष में रहने वाले लोगों को क्या हो गया है ?

भारतीय समाज पिछले 2000 वर्षों में भिन्न–भिन्न पाखंड और आडंबरों में फँसकर अपने गौरव ज्ञान परम्परा को निरंतर खोता जा रहा है। मुसलमानों, तुर्कों, मंगोलों, डचों और अंग्रेजों के भारतवर्ष पर आधिपत्य जमाने के दौरान भारतवर्ष के प्राचीन ज्ञान–विज्ञान, धर्म, अध्यात्म, साहित्य, शिक्षा आदि की शिक्षाएं निरंतर लुप्त होती गई। जन्मगत जाति व्यवस्था के कारण सम्पूर्ण भारतीय समाज में तथाकथित ब्राह्मण समाज के लोग हैं, देशी–विदेशी शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारी हो गए थे। अन्य वर्गों में छिटपुट कुछ लोग ही शिक्षित हुआ करते थे। लेकिन दलित पिछड़े समाज में शत–प्रतिशत लोग शिक्षा से वंचित थे या वंचित किया गया था। यहां जानने की जरूरत है कि विदेशी आक्रांताओं ने पिछले 1000 वर्षों में भारतीय हिंदू समाज में व्याप्त जातिगत ऊंच–नीच, छुआछूत गैर बराबरी, असमानता और स्वार्थ वादी प्रवृत्तियों का खूब लाभ उठाया। परिणाम यह हुआ, वैदिक ऋषि–मुनियों व वैदिक आचार्यों ने अपने परम पुरुषार्थ से जिस अखंड आर्यावर्त को सजाया, संवारा और उच्च शिक्षा से सर्वोत्तम बनाया था वह वैदिक शिक्षा, वैदिक विज्ञान, वैदिक साहित्य, संस्कृति और धर्म के अभाव में अपंग, लंगड़ा और अंधा हो गया। जन्म के आधार पर उच्च और निम्न माने जाने के भेद भाव का परिणाम यह हुआ कि लाखों की संख्या में हिंदुओं को मुसलमान या ईसाई बनाया गया। यह आज भी निरन्तर चल रहा है। धर्म और अध्यात्म के नाम पर पाखंड और अंधविश्वास फैलाकर अपना स्वार्थ साधने वाले तथाकथित साधुओं, संन्यासियों, प्रवचनकर्ताओं ने हिंदू जाति को भ्रमित और गुमराह किया हुआ है। हिंदू जाति में शिक्षित कहे जाने वाले लोग भी इन बाबाओं और प्रवचनकर्ताओं के मोह में फंसकर अपने विवेक और बुद्धि का सर्वनाश कर रहे हैं। वेद में सम्पूर्ण मानवता को प्रगतिशील, तर्कवादी, विज्ञानवादी, धर्मवादी, अध्यात्मवादी और परोपकारी बनने का संदेश दिया गया है, उपदेश दिया गया है, प्रेरणाएं दी गई हैं। मुसलमानों ने भारतवर्ष में लगभग 700 वर्षों तक राज्य किया। इस दौरान उन्होंने मुस्लिम मत, सम्प्रदाय और जीवन शैली का भारतीय हिंदू समाज में जबरन फैलाने का प्रयास किया। काफी कुछ इसमें वे सफल भी रहे। भारतीय हिंदू समाज पिछले 1000 वर्षों से लगभग 2000 जातियों और उप जातियों में बटा हुआ है। जन्मगत जाति को लेकर सब में भयंकर अहंकार और स्वार्थ है। एकता का सूत्र, एकता की माला इसी वजह से तैयार नहीं हो पा रही है। दूसरी सबसे बड़ी समस्या यह है महर्षि दयानन्द के बाद भारतीय समाज को कोई ऐसा नेतृत्वकर्ता, संस्कारकर्ता, अध्यात्मिक संदेश देने वाला, वेदों का उपदेश देने वाला, संस्कृति और धर्म का गौरव ज्ञान कराने वाला, वैदिक शिक्षा प्रणाली और पद्धति का प्रचार प्रसार करने वाला, वेद विज्ञान को विश्व स्तर पर पहुंचाने वाला, संस्कृत साहित्य के उत्कृष्ट मूल्यों को जन–जन तक परोसने वाला और संस्कृत तथा हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के लिए मंत्र देने वाला कोई नहीं पैदा हुआ। भारतवर्ष का दुर्भाग्य रहा दयानन्द जैसा उत्कृष्ट चरित्र के महामानव को विष देने का कार्य उस हिन्दू जाति ने अंग्रेजों के साथ और मुसलमानों के साथ मिलकर किया जिसके लिए महर्षि दयानन्द ने अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था। इतिहास को बहुत अधिक परोसने का हमारा कोई ध्येय नहीं है। अतीत बताने का

हमारा केवल इतना ही उद्देश्य है कि हम क्या थे, क्या हैं, और अभी क्या होंगे? इस पर यदि आज विचार नहीं किया गया तो आने वाला कल हमारा हमसे प्रश्न पूछेगा जिस देश, धर्म और जाति का कोई गौरव वर्तमान में उज्ज्वल नहीं होता उसका भविष्य कैसे उज्ज्वल होगा? हमें इस पर विचार करना है।

मैंने यह सब बातें इसलिए भी लिखी हैं हम एक भयंकर विडंबना और विसंगति में फंसते जा रहे हैं। स्वाध्याय और अनुभव के अभाव में, आत्मगौरव के अभाव में, स्वाभिमान के अभाव में हम धीरे–धीरे सिकुड़ते चले जा रहे हैं। आने वाली पीढ़ी को गौरवमयी जो संस्कार और धर्म की शिक्षा देने चाहिए वह नहीं दे पा रहे। मुसलमानों या ईसाईयों की निंदा, आलोचना या उन्हें गाली देने से भारतीय हिन्दू समाज का भला नहीं होने वाला है बल्कि हम अपनी ऊर्जा उसमें नष्ट करेंगे। हमको अपने गौरव को सुरक्षित रखते हुए वेद के उद्देश्यों को विज्ञान और धर्म के प्रेरणाओं को, अध्यात्मिक मूल्यों को, सामाजिक चेतना को, साहित्य और दर्शन में लिखें तत्वों को आत्मसात करने के लिए व अपने जीवन को समर्पित करने के लिए तैयार करें। आपाधापी और भागदौड़ के जीवन में मात्र 1 घंटे या आधे घंटे भी अपने संतानों के बीच में बैठकर यदि हम वेद, उपनिषद्, महाभारत, रामायण आदि की शिक्षाएं देकर उन्हें आत्म गौरव और सच्चे अर्थ में मनुष्य बनने के लिए प्रेरित कर सकें तो यह हमारा बहुत बड़ा कार्य होगा। हम इसे कर पाते हैं कि नहीं कर पाते इसमें न उलझकर हमें यह संकल्प आज ही लेना होगा। हम स्वस्थ मन, स्वस्थ चेतना से, बुद्धि से पवित्र हृदय से, शुभ उद्देश्य से, वैदिक मूल्यों को अपनी भावी पीढ़ी में पिरोने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ होंगे। हम यह कर सकते हैं। हमारे पूर्वजों ने इतना कुछ किया। इतने–इतने बड़े ग्रंथ लिख डाले, ज्ञान–विज्ञान के साहित्य रच डाले, लाखों ग्रंथ नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालयों में आक्रांताओं के द्वारा जलाने के बाद भी यदि बचे हुए हैं तो इसका कारण है हमारी श्रवण परम्परा में ज्ञान का जो धारा चलती रही है वह सबसे पवित्र और उन्नतशील रही है। दूसरी बात यह है लाखों ग्रंथ पुस्तके जलने के बाद भी लाखों पांडुलिपिया जलने के बाद भी आज जितना बचा हुआ है इनका ही यदि हम स्वाध्याय करें, इस पर हम विचार करें। हम बहुत कुछ खोने के बाद भी स्वयं को बचा लेंगे। पश्चिमी जीवनशैली, पश्चिमी विकास के मॉडल, पश्चिमी आदर्श, पश्चिमी मूल्य और पश्चिमी शिक्षा और ज्ञान की पद्धतियों पर हम जितना समय अपना लगाते हैं यदि उसका एक अंश भारतीय शिक्षा, भारतीय ज्ञान–विज्ञान, भारतीय शिक्षा–संस्कृति और धर्म पर लगा दें तो, अपना भविष्य और वर्तमान संवार सकते हैं, निर्मित कर सकते हैं।

एक पत्थर तो हौसलों से उछालो यारो आसमां में छेद हो सकता है। लेकिन हमें हो क्या गया है सोशल मीडिया और लफ्फेबाजी चुहलबाजी राजनीतिक नौटंकीओं में फंसकर भारतीय हिन्दू समाज अपने वर्तमान को निरंतर बदरंग करता जा रहा है, बिगड़ता जा रहा है, खराब करता जा रहा है, कमजोर करता जा रहा है, शक्तिहीन करता जा रहा है, गौरवहीन करता जा रहा है, आत्महीन करता जा रहा है, विज्ञानहीन करता जा रहा है। यदि हम सब कुछ खो देंगे फिर हमारा अपना क्या बचेगा? इस पर ही विचार करने की आवश्यकता है। आप विचार करिए, ऊपर कहीं गई बहुत सारी बातों पर। क्या आप विचार करेंगे? क्या अपने घर में, अपने समाज में जहां पर भी आप होंगे अपनी संस्कृति, धर्म, साहित्य और अध्यात्म के लिए अपने वैदिक संस्कार के लिए कुछ अर्पित करेंगे? समय देंगे? कुछ अंश कमाए गए धन का देंगे और हिंदू समाज को पथभ्रष्ट करने वाले तथाकथित बाबाओं और प्रवचन कार्यकर्ताओं के चक्कर में नहीं फंसेगे।

अंधविश्वास और सनसनी वाली बातें हमें क्यों भाने लगी हैं ? तथाकथित सर्वधर्म समभाव की बातें करने वाले प्रवचन कार्यकर्ताओं के प्रवचनों का हम बहिष्कार क्यों नहीं करते ? ऐसे प्रवचन कर्ताओं को हम सबक क्यों नहीं सिखाते ? क्या हम सचमुच इतने विवेकहीन. बुद्धिहीन, विचारहीन व स्वार्थी हो गए हैं कि हम अपना अच्छा बुरा, हित–अहित सोचने के काबिल भी नहीं रह गए ? योग्य भी नहीं रह गए? सोचिए, बार–बार सोचिए! हजार बार सोचिए ! यदि आज नहीं सोचा तो बीता समय फिर लौटेगा नहीं! विधर्मी लोग आतंकवादी, हिंसक गतिविधियों के द्वारा पूरे संसार में अपना आधिपत्य जमाने के लिए साम, दाम, दंड, भेद का प्रयोग कर रहे हैं और हम आप जन्मगत जाति के चक्कर में फंसकर अहंकार और लोभ और स्वार्थ के चक्कर में फँसकर अपना सर्वनाश कर रहे हैं। कौन

सोचेगा ? आप नहीं सोचेंगे फिर कौन सोचेगा ? हम बाबाओं के चक्कर में क्यों फंसते जा रहे हैं ? हम वैदिक धर्म की पुस्तकों का स्वाध्याय करने के लिए आगे नहीं आते, जो संपूर्ण मानवता को उच्च श्रेणी का संस्कार देने की बात करती हैं। जहाँ सब गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर है। हमारे राजनीतिक, समाजसेवी, दिशा दर्शक संत, महात्मा, साहित्यकार प्रशासक, उद्योगपति, वैज्ञानिक, प्रखर वक्ता, संगठनों के प्रमुख, युवाओं के पैरोकार, पत्रकार, सभी अपनी भूमिका भूल कर, अपने स्वार्थ में उलझ कर, अपने वर्तमान और भविष्य को क्यों बर्बाद कर रहे हैं ? क्यों खराब कर रहे हैं ? हम किन विचारों में उलझ कर श्री हीन, कीर्तिहीन हो गए हैं। हमारा दृष्टिकोण ही बदल गया। हम दूसरों की प्रशंसा में कलम तोड़ते जा रहे हैं। वाणी का दुरुपयोग कर रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है, इतनी गिरावट कैसे आती जा रही हैं ? हम दूसरों को दोष देने के बजाय आसपास, पास पड़ोस में लोगों को लेकर भारतीय हिंदू समाज को दिशा दें। भारतवर्ष भारतीयों का है। आर्यों का है। उन सभी लोगों का है जो भारतवर्ष से प्यार करते हैं। हम किसी से घृणा न करें, किसी से ईष न करें यह हमारी परंपरा है। यह हमारी संस्कृति की विरासत है। लेकिन हमसे कोई जलन रखता है, द्वेष करता है, हमें कोई मारता है, हमारी संस्कृति और धर्म पर आक्रमण करता है, तो हम उस समय भी यदि नपुंसक और कायर बने रहे तो यह हिंदू होने या मानव होने का कोई लक्षण नहीं है। हम उन पूर्वजों की संतान हैं जिन्होंने अपने पुरुषार्थ से, अपने ज्ञान व वैभव से, अपने बाहुबल से, अपने धर्म से, अपने श्रम से पूरे संसार को मार्गदर्शन किया। हम आप स्वयं को इतना सामर्थवान बनाएं, इतना ज्ञानवान बनाएं, इतना धनवान बनाएं, इतना शिक्षावान बनाएं, इतना विद्यावान बनाएं, परोपकारी बनाएं कि हम सबको शिक्षा दे सकें। भटके हुए लोगों को वेद के ज्ञान पर लाकर के मानवता की भलाई में हम सब को आगे बढ़ा सकें। विचार करिए, आप ऐसा कर सकते हैं। बस, आप के संकल्प की आवश्यकता है। दृढ़ प्रतिज्ञ होने की आवश्यकता है। उद्देश्यवान होने की आवश्यकता है। मन की आंखों को खोलने की आवश्यकता है। स्वयं के आत्मगौरव को पहचानने की आवश्यकता है। अपने जीवन धर्म को जानने की आवश्यकता है, और पूर्वजों के दी गई वैदिक संपत्ति को पहचानने की आवश्यकता है। आप हम वहां तक पहुंच सकते हैं जहां तक हमारे पूर्वजों ने कभी पहुंचकर के पूरे विश्व को चकाचौंध कर दिया था। आश्चर्यचकित कर दिया था। तब से भारतवर्ष महान् है। आर्यावर्त महान् है। ***************

आर्ष क्रान्ति के सुधी पाठकों से

समाज सुधार, संस्कृति उन्नयन और धर्म जिज्ञासा क्षेत्र की अनेक पत्रिकाएं सोशल मीडिया पर आपने देखी और पढ़ी होगी । आर्ष क्रांति पत्रिका का तेवर और स्वरूप कैसा है इसे जानने की जिज्ञासा आपके मन में पैदा होती है, तो यह समझना चाहिए आप एक विचारवान और जिज्ञासु किस्म के बुद्धिमान व्यक्ति हैं । हमें आप जैसे क्रांतिकारी और प्रगति गामी विचारवान व्यक्ति का साथ चाहिए। फिर देर किस बात की । नीचे लिंक पर जाइए और फार्म भर कर हमें भेज दीजिए। अब आप जुड़ गए हैं ऐसी संस्था और पत्रिका से जो एक आदर्श समाज, उन्नतशील संस्कृति और मानव मूल्यों के धर्म की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है । आप एक शुभ संकल्पवान व्यक्ति हैं और यह पत्रिका भी शुभ संकल्पों को मूर्त रूप देना चाहती है, एक आदर्श समाज निर्माण में हमारी संस्था और पत्रिका से जुड़कर आप अपना अमूल्य योगदान दे सकते हैं । आपका हमें इंतजार रहेगा।

इस लिंक पर क्लिक करके यह फार्म अवश्य भरें

http://bit.ly/aarshkranti

नोट – फॉर्म को भरने के लिए अपने मोबाइल / कंप्यूटर में इन्टरनेट अवश्य चालू रखे

BRAHMCHARYA DURING EDUCATION

– ✍ Dr. Roop Chandra 'Deepak'
Lucknow (U.P.)
Mob. 9839181690

According to the Vedic Culture, a stern observance of brahmcharya is essential for all boys and girls during the period of their education.This is an ancient system, of late, reiterated by Rishi Dayanand in the second and third chapters of Satyarth Prakash in following manner.

"The boys should be preached that their well-being lies in preserving the vital fluid, and misery in wasting it. Whosoever preserves his fluid, his health, intellect, power and energy duly grow so that he enjoys pleasure. For this preservation the boys should shun love-stories, company of amorous people, contemplation of love-exciting objects, looking at females, keeping company with them, talking to them, or holding contactual relation with them in private."

"The pupils should devote their attention to healthy thoughts and acquisition of knowledge. The man whose body is devoid of semen, becomes impotent and evil-minded. Whoever contacts the disease of spermatorrhea, is sure to perish by becoming weak, dull, foolish, disheartened, cowardly, unsteady, feeble and devoid of energy. If you fail at this stage of your life, to acquire noble thoughts and knowledge, or to preserve your fluid, then you will never again get in this life this precious opportunity."

"The mothers and fathers should instruct their kids like this: As long as we are alive to carry on the affairs of the family, so long you should try to acquire knowledge and physical strength. In fact, from birth upto the age of five, the children should be instructed by their mother, and from the sixth to the eighth by their father. In the beginning of ninth year, the parents should perform the upnayan sanskar of their child and send him to the gurukul. The boy to the boys' gurukul and the girl to the girls' gurukul. "

Rishi Dayanand was a brahmchari in the fullest sense of the term. He wanted the pupils also to observe brahmcharya throughout their education. So he put forth an eight-fold brahmcharya, the first of Seven Rules for a divine and complete education. The First of these Seven Rules, i.e., the eight-fold brahmcharya has eight negations. The pupils must refrain from — (1) looking at the person of opposite sex; (2) contactual relation; (3) private meeting; (4) conversation; (5) love-story-telling; (6) intercourse; (7) contemplation of a tempting object; and (8) any such company.

The Second Rule is that the boys' gurukul and the girls' gurukul ought to be distant from each other by two koshas or four kms. The Third Rule is that a gurukul should be at least four koshas or eight kms away from a village or a town. As the Fourth Rule all teachers, employees and servants must be men in the boys' gurukul and women in the girls' gurukul. A boy of five years or more would not enter into the premises of the girls' gurukul and a girl of 5 years or more would not enter into the premises of the boys' gurukul.

The Fifth Rule is regarding the equality between children of Raja (a king) and runk (a pauper). This contains two principles of a free and uniform education. Education should be free. The pupils should not be asked to pay anything as fee. If even a rupee be the fee, all pupils cannot pay it always for all years. Rishi Dayanand says, 'All should get the same kinds of clothes, food and beddings. Whether they be princes or princesses, or of poor families, they all should live a life of austerity.

"The parents should not meet their children, nor the children their parents, nor should there be a communication between them, so that they might be entirely free from the cares of the world and devote themselves exclusively to their studies. When they go for a walk, they should be accompanied by their tutors, so that they might not do any evil thing, nor be idle or indolent. The teachers should keep the pupils away from undesirable things, so that they may increase their happiness by attaining sound education, training, refined manners, good habits and strength of body and soul."

The Sixth Rule is related to a compulsory education. Rishi Dayanand stands for a compulsory education upto some level like High School in modern times. He does not speak about High School. He speaks in terms of Vedas only. He speaks to study all the Four Vedas, or Three, or Two, at least One.

Unfortunately, we in India do not firmly stand for Vedic Education. When we talk of education, we generally mean High School, Graduation, etc. Even High School or class VIII is not compulsory in India. People put up questions as follows:-

(1) The students 'copy' the answers in the examinations, so why the pass-certificates?

(2) If all become educated, who will work as a labourer?

(3) Why is education required for a farmer?

(4) The educated boys and girls are less obedient to their parents.

(5) The uneducated are more honest, religious and united.

The negative inferences in the above narrations are for bad people. Each and every nation or society is always guided

by educated people. The said 'copying' is a crime and should be dealt with accordingly. The civil armies of judges, professors, doctors, engineers, businessmen and several other workers are the products of high education. Educated farmers are better farmers. The educated people better handle the jams and queues. The educated boys and girls can serve their parents to higher satisfaction.

The educated people better understand the government policies, their implementation and next steps. They can better fight and defeat all sorts of corruption. They cannot be religiously befooled or polarised. The clever politicians cannot exploit them. The well educated boys and girls certainly take the nation and society to new heights. Hence Rishi Dayanand raises his pious and strong voice for a compulsory education.

He writes in Satyarth Prakash-''There should be some law of the State or a rule of the society so that no man could keep his son or daughter at home beyond the age of five or eight years. They must send them to school, and if they do not send, they should be penalized.'' As said earlier, Rishi Dayanand stands for an equality between children of raja and runk. Along with an Equality, a Uniformity is also there. The Seventh Rule is about a Uniform Education in the country.

In modern India there are four types of Education Systems, as given below:-

1. Government Schools — Most of the students study in Government Schools. Fees are nominal there. Upto class 8th the students get free lunch as well. The standard of education is generally poor. I mean to say that it is said to be poor.

2. Public Schools — Most of big businessmen, officers and intellectuals send their children to Public Schools. These schools charge high fees, provide education of a high order and earn a high reputation as well.

3. Minority Institutions — They are governed by minority communities for minority education on central government's Funds. They are not meant for a general education in India.

4. Vedic Gurukuls — A scriptural, spiritual and national education of high order is imparted in indigenous Gurukuls, having separate units for boys and girls. Neither government nor students bear any expenses there, as the philanthropic donors shoulder the entire burden with love. This education is for knowledge and character as the Government does not recognise it for public services.

The Vedic Education System is the gurukul system mentioned above. This System requires a complete observance of brahmcharya during entire period of education. This is for the development of physical strength, mental holiness, truthfulness and divinity. Hence the First Stage known as Brahmcharya is the real foundation of Divine Humanity. ********

यतेमहि स्वराज्ये। (ऋग० ५.६६.६)

हम स्वराज्य के लिए प्रयत्न करें ।

शान्ति

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वँ
शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।
— यजुर्वेद ३६.१७

(द्यौः) द्यौ [में जो] (शान्तिः) शान्ति [है] (अंतरिक्षम्) अंतरिक्ष [में जो] (शान्तिः) शान्ति [है], (पृथिवी) पृथिवी में जो (शान्तिः) शान्ति [है], आपः जलों, [में जो] (शान्तिः) शान्ति [है], (औषधयः) औषधियों [में जो] (शान्तिः) शान्ति [है], (वनस्पतयः) वनस्पतियों [में जो] (शान्तिः) शान्ति [है], (विश्वे देवाः) सब देवों [में जो] (शान्तिः) शांति [है], (ब्रह्म) ब्रह्म [में जो] (शान्तिः) शांति [है], (सर्वम्) सब [में जो] (शान्तिः) शान्ति है,, (शान्तिः एव शान्तिः) शान्तिः ही शान्तिः [है], (सा शान्तिः) वह शान्ति (मा एधि) मुझे प्राप्त हो।

१) शान्ति का यथार्थ अर्थ न समझने के कारण शान्ति पाठ के विषय में अनेक भ्रांत धारणाएं फैली हुई हैं। कोई पूछता है, 'क्या शान्ति पाठ से द्यौ आदि में शान्ति होती है।' कोई कहता है। 'वर्तमान युग में क्रांति की आवश्यकता है। अतः शान्ति के स्थान में क्रांति का पाठ होना चाहिए।' कोई कहता है, 'अधिवेशनों व सभाओं में उमंग, उत्साह के पश्चात् शान्ति पाठ से सेट किए कराए पर पानी फेरा जाता है?'

प्रथम, शान्ति के अर्थ पर विचार कीजिए। जब सभा आदि में कोलाहल होता है तो सभापति कहता है 'शान्ति, शान्ति।' यहां शान्ति का अर्थ है ***व्यवस्था।***

जब कोई दुःख या विपत्ति में घबराता है तो हम कहते हैं, 'शान्ति धारण कीजिए' यहां शान्ति से आशय है ***धैर्य।***

जब कोई क्रोध करता है तो कहते हैं, 'शान्ति रखिए'। यहां शान्ति से तात्पर्य है ***संतुलन***।

जब कोई बहुत शीघ्रता करता है तो कहते हैं, 'शान्ति के साथ कार्य कीजिए।' यहां शान्ति से अभिप्राय है ***स्थैर्य।***

शान्ति का अर्थ निश्चेष्टा अथ वा विराम नहीं है। शान्ति का अर्थ है व्यवस्था, धैर्य, संतुलन, स्थैर्य।

द्वितीय, 'द्यौ को जो शांति प्राप्त है वह शान्ति मुझे प्राप्त हो।' द्युस्थ, समस्त लोक अनवरत गति कर रहे हैं और उनमें प्रतिक्षण महान् संघर्ष हो रहे हैं। तो भी द्यौ अपना नियत कार्य शान्ति ख व्यवस्था, धैर्य, संतुलन और स्थैर्य, के साथ किए चला जा रहा है वही शान्ति मुझे प्राप्त रहे।

'अंतरिक्ष को जो शान्ति प्राप्त है वही शांति मुझे प्राप्त रहे।' अंतरिक्ष में भी सदा, सतत संघर्ष हो रहे हैं। तो भी अंतरिक्ष अपना नियत कार्य शांति खव्यवस्था, धैर्य, संतुलन और स्थैर्य, के साथ किए जा रहा है वहीं शान्ति मुझे खसंघर्षरत रहते हुए, प्राप्त रहे।

इसी प्रकार, संघर्षरत रहते हुए भी पृथ्वी, जलों, औषधियों, वनस्पतियों को जो शान्ति प्राप्त है सूर्य, चंद्र, पवन आदि समस्त देवों को जो शान्ति प्राप्त है, ब्रह्मा को जो शान्ति प्राप्त है, विश्व को जो शान्ति प्राप्त है, सर्वत्र जो शान्ति ही शान्ति है, वही शान्ति मुझे प्राप्त रहे।

शान्ति पाठ में नपुंसक शान्ति की प्रार्थना नहीं है अपितु सतत संघर्ष में व्यवस्था, धैर्य, संतुलन और स्थैर्य की भावना है। पाठक इस मर्म को हृदयंगम करके, प्रत्येक बार इस मंत्र से अपने अंदर अधिकाधिक संघर्ष की भावना की वृद्धि और व्यवस्था, धैर्य, संतुलन तथा स्थैर्य की सम्पुष्टि करें। संघर्ष में ही तो शान्ति की आवश्यकता होती है।

संघर्ष में शान्ति। शान्ति के साथ संघर्ष। ****

(साभार—वेदालोक पुस्तक, लेखक स्वामी विद्यानन्द विदेह)

कर्त्तव्याकर्त्तव्य

– ✍ पं० शिवनारायण उपाध्याय
कोटा (राजस्थान)

संसार में कर्म तो प्राणी मात्र को करना ही पड़ता है। कुछ तो स्वाभाविक कर्म हैं जो अपने आप होते रहते हैं जैसे श्वास लेना और छोड़ना, शरीर में रक्त परिभ्रमण का होना, भोजन संस्थान में भोजन का पचना, मस्तिष्क में विचारना आदि और दूसरे एच्छिक कर्म हैं जिनका करना या न करना सामान्य रुप से प्राणियों के हाथ में है परन्तु उन्हें भी करना ही होता है। एच्छिक कर्मों को दो भागों में विभाजित किया जाता है। सुकर्म और दुष्कर्म। फिर इन कर्मों के साथ इनके फल भी लगे हुए हैं, अच्छे सुकर्म का अच्छा फल और दुष्कर्म का बुरा फल। मनुष्य विवेकशील प्राणी है अतः उससे आशा की जाती है कि वह श्रेष्ठ कर्म ही करें। एमेन्युअल कान्ट तो कर्त्तव्य कर्म को सबसे श्रेष्ठ मानते थे।

मनुष्य को जिन कार्यों का निष्पादन करना आवश्यक है उन्हें उसके कर्त्तव्य कहा जाता है और जिन कार्यों को नहीं करना है उसे उसके लिए अकर्त्तव्य कहा जाता है। शास्त्रों में कर्त्तव्य बोध के लिए बहुत कुछ कहा गया है। हम इस लेख में ***दक्ष स्मृति*** के आधार पर हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए इस पर विचार करेंगे। वैसे सभी स्मृति ग्रन्थों में इस विषय पर पर्याप्त चिंतन हुआ है। पहले हमें क्या करना चाहिए ? इस पर दक्ष स्मृति के आधार पर विचार करते हैं।

1. अतिथि के आने पर हमारा व्यवहार कैसा हो ? इस पर कहते हैं –

मनश्चक्षुर्मुखं वाचं सौम्यं दधाच्चतुष्टयम् ।
अभ्युत्थानमिहागच्छ पृच्छालाप प्रियान्वितः।।
उपासनामनुव्रज्या कार्याण्येतानि यत्नतः।।

– ***दक्ष स्मृति* ३/४.५**

नौ बातें मंगलकारक और करणीय हैं। अतिथि सेवा मुख्य धर्म है। घर पर अतिथि आ जाये तो गृहस्थ को क्या करना चाहिए। वह इन दो श्लोकों में बताया गया है। (१) अतिथि के आगमन पर हमारा मन सौम्य होना चाहिए, मन में प्रसन्नाता होनी चाहिए। (२) हमारी दृष्टि में भी सौम्यता झलकनी चाहिए। (३) हमारे मुख पर सौम्यता दर्शित होनी चाहिए। मुख की आकृति से ही तो यह जाना जाता है कि व्यक्ति प्रसन्नचित्त है। (४) अतिथि का वाणी की सौम्यता के साथ स्वागत करना चाहिए। (५) अतिथि के सत्कार में तुरन्त उठकर आगे बढ़कर उससे नमस्ते करना चाहिए, आयु वृद्ध और ज्ञान वृद्ध हो तो उसके चरणों का भी स्पर्श करना चाहिए। (६) अतिथि से उनकी कुशलता पूछना चाहिए, 'कहां से आये है', 'रास्तें में कोई कठिनाई तो नहीं आई' यह जानने के लिए उनसे प्रश्न करना चाहिए। (७) उनसे स्नेह पूर्वक वार्तालाप करना चाहिए। (८) अतिथि के समीप बैठकर उन्हें जल पान कराना चाहिए। यदि वे थके हुए हो तो उन्हें आराम करने के लिए कहना चाहिए। (९) जब वे जाने लगें तो उनके पीछे–पीछे चलकर कुछ दूर तक जाना चाहिए।

2. उपर्युक्त के साथ नौ बातें और भी हैं जो अतिथि के आने पर करनी हैं–

ईषद्दानानि चान्यानि भूमिरापस्तृणानि च।
पाद शौचं तथाभ्यङ्गमाश्रयः शयनं तथा।
किंचिच्चान्नं यथा शक्ति नाश्यानश्नन् गृहे वसेत्।।
मृज्जलं चार्थिने देवमेतान्यपि सदा गृहे।।

–दक्ष स्मृति ३/६–७

पदार्थ – (१) अतिथि को स्थान देना अर्थात् अतिथि को किसी निश्चित स्थान पर ठहराना, (२) अतिथि को पहले हाथ–मुंह धोने और फिर पीने के लिए जल देना, (३) उन्हें उच्च आसन पर बैठाना तथा स्वयं उनसे नीचे आसन पर बैठना, (४) अतिथि के पैर स्वयं ही धुलाना, (५) आवश्यक होने पर साबुन, तेल आदि देना, (६) उन्हें उचित स्थान देना, (७) आराम करने के लिए पलंग आदि की व्यवस्था करना, (८) यथाशक्ति भोजन उपलब्ध कराना, (९) मिट्टी (वर्तमान में साबुन) और जल देना। अतिथि को कभी भी भूखा नहीं सोने देना। उसके इच्छानुसार भोजन देना श्रेष्ठ कर्म है।

3. हमें प्रतिदिन नियमित रूप से क्या करना चाहिए ? इस विषय में दक्ष स्मृति हमें खुलकर बताती है –

सन्ध्या स्नानं जपो होमः स्वाध्यायो देवतार्चनम्
वैश्वदेवं तथातिथ्यमुद्धतं चापि शक्तितः।।
पितृ देवमनुष्याणां दीनानाथतपस्विनाम्।
माता पितृगुरूणां च संविभागो यथार्हतः।।

– दक्ष. स्मृति ३/८–६

हमें प्रतिदिन निम्न नौ कार्यों को करना ही चाहिए – (१) प्रातः काल सन्ध्या वन्दन (२) स्नान (३) जप (४) हवन या देव यज्ञ (५) स्वाध्याय (६) देव पूजन (७) बलिवैश्व, देवयज्ञ (८) अतिथि सेवा (६) यथा शक्ति देव–पितृ–मनुष्य,दीन, अनाथ, तपस्वी, माता–पिता एवं गुरू आदि को यथा विधि यथा योग्य भोजन तथा जलांजलि से सन्तुष्ट करना।

4. फिर नौ निन्दित कर्म बताए गए हैं जो सर्वथा त्याज्य हैं। सद् गृहस्थ को इन निन्दित कार्यों से सदैव दूरी बनाई रखनी चाहिए तथा परिवार के अन्य सदस्यों को भी इनसे बचाना चाहिए –

अनृतं पारदार्यं च तथाभक्ष्यस्य भक्षणम् ।
अगम्यागमनापेयं हिंसा स्तेयं तथैव च
अश्रौतकर्माचरणं मित्रधर्म बहिष्कृतम् ।
नवैतानि विकर्माणि तानि सर्वाणि वर्जयेत।।

– दक्ष. स्मृति ३ /१० –१२

ये नौ निन्दित कर्म इस प्रकार हैं– (१) असत्य भाषण (२) परदारासेवन (३) अभक्ष्य भक्षण अर्थात् जो भोजन नहीं खाना है जैसे मांस–मछली आदि उसे खा लेना (४) अगम्यागमन जिन सम्बन्धों में विवाह होना वर्जित है उनमें विवाह कर लेना (५) अपेय–पान अर्थात् शराब आदि पीना (६) हिंसा करना (७) चोरी करना अर्थात् किसी वस्तु को उसके स्वामी की आज्ञा के बिना ले लेना, उसका उपयोग कर लेना (८) वेद बाह्य कर्मों का आचरण करना तथा (६) मैत्र–धर्म का निर्वाह न करना।

5. नौ परम गोपनीय बाते हैं इन्हें कभी भी प्रकट नहीं करना चाहिए –

आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मन्त्रमैथुन भेषजम्।
तपो दानावमानौ च नव गोप्यानि यत्नतः।।

– दक्ष. स्मृति ३/२–३

(१) अपनी आयु (२) धन (३) घर का कोई भेद (४) मंत्र (५) मैथुन (६) औषधि (७)तप (८) दान तथा (६)अपमान।

6. अब नौ बातें ऐसी हैं जिनको प्रकाश में लाना चाहिए। इन नौ बातों को छिपा कर नहीं रखना चाहिए

प्रायोग्यमृणशुद्धिश्च दानाध्ययनविक्रयः ।
कन्यादानं वृषोत्सर्गों रहः पापमकुत्सितम्।।

– दक्ष. स्मृति ३/३–४

(१) ऋण लेने की बात (२) ऋण शुद्धि उऋण होने की बात (३) दान में मिली वस्तु अथवा वस्तु के दान की बात (४) अध्ययन (५) विक्रय की गई कोई वस्तु (६) कन्या दान (७) वृषोत्सर्ग (८) एकान्त में किया गया पाप (६) अनिन्दित कर्म।

7. अब नौ अक्षय सफल बातें। नौ प्रकार के मनुष्य को जो कुछ भी दिया जाता है वह सफल और अक्षय हो जाता है।

माता पित्रोर्गुरौमित्रे विनीते चोपकारिणि।
दीनानाथ विशिष्टेभ्यो दत्तं तु सफलं भवेत्।।

– दक्ष स्मृति ३/५

(१) माता (२) पिता (३) गुरु (४) मित्र (५) विनयी (६) उपकार करने वाला (७) दीन (८) अनाथ तथा (६) सज्जन या साधु। वास्तव में उपर्युक्त ये सभी व्यक्ति सहायता के पात्र है। जब कभी हमसे कोई याचना करे तो हमें तुरंत उसकी पूर्ति कर देनी चाहिए। हमें इसका प्रचार नहीं करना चाहिए।

8. नौ निष्फल बातें– नौ प्रकार के व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें कुछ भी दिया जाए तो वह निष्फल हो जाता है–

धूर्ते वन्दिनि मन्दे च कुवैद्ये कितवे शठे ।
चाटु चारण चौरेभ्य दत्तं भवति निष्फलम् ।।

– दक्ष स्मृति ३/६

(१) धूर्त व्यक्ति (२) बन्दी (३) मन्द बुद्धि (मूर्ख) (४) अयोग्य वैद्य (५) कितव या जुआरी (६) शठ (७) चाटुकार (८) प्रशंसा के गीत गाने वाले चारण तथा (६) चोर इन नौ प्रकार के व्यक्तियों को कुछ भी नहीं दिया जाना चाहिए।

9. आपत्ति काल में भी अदेय नौ वस्तुएं।

प्रजापति दक्ष ने बताया है कि निम्न नौ वस्तुओं को विपत्ति काल में भी किसी को भी नहीं देना चाहिए।

सामान्यं याचितं न्यस्तमाधिर्दाराश्च तद्धनम् ।
अन्वाहितं च निक्षेपः सर्वस्वं चान्वये सति।।

– दक्ष स्मृत ३/७

(१) सर्व सामान्य जनता की सम्पत्ति (२) चंदे की राशि

(३) दूसरे को देने को मिली हुई वस्तु या धरोहर की सम्पत्ति (४) बन्धन (गिरवी) की वस्तु (५) अपनी पत्नी (६) पत्नी का धन (७) जमानत की सम्पत्ति (८) जमानत की वस्तु (६) सन्तान परम्परा के होने पर अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति।

मैं समझता हूं कि हम यदि दक्ष स्मृति के बताए गए कर्त्तव्यों का पालन करें और अकर्त्तव्यों से दूर रहें तो हमारा जीवन वास्तव में सफल हो जायेगा।

इति शम्।

****

एकता का साधन

एकता का व्यापार-स्थल मन है। ***जब तक एक मन, एक हानि-लाभ, एक सुख-दुःख परस्पर न मानें तब तक उन्नति होना बहुत कठिन है।*** जब सर्व भूगोल में वेदोक्त एक मत था, उसी में सबकी निष्ठा थी, और एक-दूसरे का सुख-दुःख, हानि लाभ आपस में समान समझते थे तभी भूगोल में सुख था। अब बहुत मतवाले होने से बहुत सा दुःख और विरोध बढ़ गया है। इसका निवारण करना बुद्धिमानों का काम है। परमात्मा सबके मन में सत्य का ऐसा अंकुर डाले कि जिससे मिथ्या मत शीघ्र ही प्रलय को प्राप्त हों। इसमें सब विद्वान् लोग विचार कर विरोधभाव छोड़ के आनन्द को बढ़ावे। परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना अति कठिन है। विचारों की भिन्नता रहते एकता सम्भव नहीं हो सकती। विरोध तो मानसिक रोग है। मानसिक रोग को शान्त करने में बाह्योपचारों से सहायता भले ही मिल जाये किन्तु वे उसे नष्ट नहीं कर सकते। उनसे पथ्य का काम लिया जा सकता है, औषधि का नहीं। इसलिए वेद के एकता सूत्र में *"समानं मनः" "सं वो मनांसि जानताम्" "समानमस्तु वो मनः" "समानो मन्त्रः" "समानी व आकूतिः"* ! इत्यादि पर ही बल दिया है । जिन संस्थाओं का ध्येय एक नहीं उनका मार्ग भी एक नहीं हो सकता। जिन व्यक्तियों का आदर्श एक नहीं हो सकता उनकी एक समिति नहीं बन सकती। विचारों की एकता के बिना मनुष्यों की एकता के लिए किए गये सभी प्रयत्नों का विफल होना स्वभाविक है। भारत के वर्तमान नेता ६० वर्ष के अनवरत परिश्रम और परीक्षण के बाद इसी परिणाम पर पहुँचे हैं । देश का दुर्भाग्य है कि *"जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः, जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः"* के अनुसार वे अभी तक भी उसी मिथ्या मार्ग का अनुसरण किये जा रहे हैं। मिथ्या मार्ग का अवलम्बन करके कितना भी त्याग और बलिदान क्यों न किया जाये, वह फलीभूत नहीं हो सकता। महर्षि के सामने ***कृण्वन्तो विश्वमार्यम्*** का वैदिक आदर्श था। भारतीय समस्या के समाधान के लिए भी इसी सार्वभौम सिद्धान्त को क्रियान्वित करना आवश्यक है। आर्य समाज ने इसी ध्येय को सामने रखकर अपना कार्यक्रम बनाया।

एक दिन श्री मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या ने ऋषि से पूछा कि *"भगवन् ! भारत का पूर्ण हित कब होगा ? यहाँ जातीय उन्नति कब होगी ?"* ऋषि ने उत्तर दिया कि ***एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाए बिना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर है। सब उन्नितियों का केन्द्र स्थान ऐक्य है। जहाँ भाषा, भाव और भावना में एकता आ जाये, वहाँ सागर में नदियों की भान्ति, सारे सुख एक-एक करके प्रवेश करने लगते हैं। मैं चाहता हूँ कि देश के राजे-महाराजे अपने शासन में सुधार और संसोधन करें। फिर भारत भर में आप ही सुधार हो जायेगा।***

ऋषि दयानन्द के मतानुसार स्वराज्य प्राप्ति के लिए निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है –

एक मत, एक सुख दुःख, एक हानि लाभ, एक व्यवहार, एक भाषा, एक शिक्षा, ब्रह्मचर्य पालन, सत्याचरण, दलितोद्धार, स्वदेशी का प्रयोग, सैन्य शक्ति का गठन, गोपालनादि। इन्हीं में से अधिकांश बातों का समावेश गाँधी जी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रम में किया है। उसमें एक मत सम्बन्धी बात को छोड़ दिया गया है जबकि यही सबसे आवश्यक है। ऋषियों द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण किए बिना अभीष्ट की सिद्धि नहीं हो सकती।

साभार – स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी द्वारा लिखित ***स्वराज्य दर्शन*** के १६६७ में ***आर्य प्रकाशन*** द्वारा प्रकाशित संस्करण से।

महर्षि दयानन्द का यज्ञ विषयक् वैज्ञानिक पक्ष

– ✍ पं॰ वीरसेन वेदश्रमी

वेद में यज्ञ को ब्रह्मांड की धुरी कहा गया है। ब्राह्मण ग्रंथों व अनेक ग्रंथों में यज्ञ की महिमा का विस्तार से वर्णन किया गया है। यज्ञ कोई साधारण प्रक्रिया नहीं है। यह पूरा ब्रह्मांड ही यज्ञमय है। सभी शुभ कर्म यज्ञ हैं। परोपकार यज्ञ है। ज्ञान यज्ञ है। आत्मा की उन्नति यज्ञ है। विद्या प्राप्त करके संस्कृति और धर्म की रक्षा करना यज्ञ है। आर्य जगत् के महान् लेखक, विद्वान् तपस्वी वीरसेन वेदश्रमी ने अपनी पुस्तक वैदिक सम्पदा में यज्ञ का विस्तार से वर्णन किया है। उपर्युक्त लेख में सामान्य यज्ञ की जहां चर्चा है वहीं पर विशेष यज्ञ को भी जीवन से जोड़ा गया है। इस लेख को प्रकाशित करने का हमारा विशेष उद्देश्य है –जिससे यह समझा जा सके कि हमारी यज्ञ परंपरा क्या है। इसकी गहराई और उसका धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व क्या है, यज्ञ का जीवन दर्शन क्या है। जिसमें मंत्रों का महत्व क्या है, यज्ञ में अनेक पाठों का महत्व क्या है। किन मंत्रों से आहुतियां दी जाएं, किन मंत्रों से न दी जाएं, इन सभी बातों की विवेचना इस लेख के माध्यम से हम पढ़ सकते हैं। आशा है पाठकगण निष्पक्ष रूप से पढ़कर इस लेख से लाभ उठाएंगे और यज्ञ की भावना से ओतप्रोत होकर अनेक प्रकार के यज्ञों में यजमान की भूमिका निभाएंगे।

–सम्पादक

यज्ञ में मन्त्रोच्चारण कर्म के साथ आवश्यक है –

महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने यज्ञ की एक अत्यन्त लघु पद्धति या विधि हमें प्रदान की जो १० मिनट में पूर्ण हो जावे। उसमें मन्त्र के साथ कर्म और आहुति का योग किया। बिना मन्त्र के यज्ञ का कोई कर्म, यज्ञ का अंग नहीं बन सकता। बिना मन्त्र उच्चारण किये किसी भी पदार्थ को अग्नि में जला देने से, वह यज्ञाहुति का स्वरूप प्राप्त नहीं कर सकती और न वह उस महान् लाभ को भी उत्पन्न करने में उतनी समर्थ हो सकती है। इसलिए विधिवत् यज्ञ करने से ही यथोचित लाभ होगा, अन्यथा नहीं।

यज्ञ की प्रथम क्रिया और प्रथम मन्त्र का भाव –

भगवान् दयानन्द ने प्राणिमात्र पर अपार दया करके यज्ञ की प्रथम क्रिया प्रारम्भ करने के लिए एक छोटा सा मन्त्र दिया। कहा कि इस महान् कार्य के लिये अग्नि प्रदीप्त करना हो तो– ***ओ३म् भूर्भुवः स्वः*** – यह छोटा सा मन्त्र बोलकर घृत का दीपक प्रज्वलित कर लेना। क्योंकि यही घृत दीप की मूलाधार प्रारम्भ ज्योति ही व्याप्त रूप में विराट बनकर भू अर्थात् पृथिवी, भुवः अर्थात् अन्तरिक्ष और स्वः अर्थात् द्युलोक के लिये ओ३म् रक्षा करने वाली है। इसी घृत युक्त अग्नि शिखा में भूः अर्थात् प्राणों को उत्पन्न करने की शक्ति है। इसी में भुवः अर्थात् दुखनाशक शक्ति है और इसी में स्वः अर्थात् लोक और परलोक का समस्त सुख प्रदान करने की शक्ति है।

यज्ञ में द्वितीय क्रिया और उसका मन्त्र–

केवल घृत का दीपक जलाने से यज्ञ नहीं हो जाता। इस घृत दीप की अग्नि से कपूर को प्रज्वलित कर चन्दनादि की समिधा रखकर उसे एक पात्र में रखना चाहिए और – ***ओ३म् भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना॰***– यह सम्पूर्ण मन्त्र बोलकर कुण्ड मध्य में उसे स्थापित करना चाहिए। मन्त्रों में जो अपूर्व विज्ञान भरा है वह मन्त्र बोलने से ही जाना जाता है। बिना मन्त्र के वह प्रकाशित नहीं होता।

द्वितीय क्रिया के मन्त्र का भाव –

इस अग्न्याधान मन्त्र का भाव निम्न प्रकार हृदयंगम करना चाहिए। ***ओ३म् भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना*** = यह भूर्भुवः स्वः आदि तीन ज्योतियों से युक्त अग्नि है जो प्रकाशमय द्यु लोक के समान महान् विशाल और ***पृथिवीव वरिम्णा*** = अन्तरिक्ष के समान महिमाशाली है, सामर्थ्यवान् एवं सर्व सुखोत्पादक है। तस्यास्ते पृथिवी ***देवयजनि पृष्ठे*** = उस देव यजनि अर्थात् देवों की यज्ञस्थली पृथिवी के ऊपर– ***अग्नि– मन्नादं*** = अन्नों के पक्व करने वाली अग्नि को– ***अनाद्यादधे*** = अन्नों को भोज्य रूप प्रदान करने के लिए स्थापित करता हूं। अन्नों को भोज्य रूपता प्रदान करने का एक गूढ़ तात्पर्य यह है कि यज्ञ से जो अन्न की उत्पत्ति एवं पक्वता होती है उस अन्न में से विष का भाग दूर होता जाता

है। उसमें रोगोत्पादकता का दोष नहीं होता और वह अन्न अत्यन्त स्वादिष्ट, बल, वीर्य, बुद्धिवर्धक तथा पुष्टिकारक हो जाता है।

तृतीय क्रिया उसका मन्त्र और भाव –

इस प्रकार पूर्वोक्त मन्त्र पूर्वक अग्नि स्थापन क्रिया होने पर तीसरी क्रिया– ***ओ३म् उद्बुध्यस्वाग्ने०*** मन्त्र से उस अग्नि को प्रदीप्त करने से सम्बन्धित है। उस स्थापित अग्नि को लक्ष्य में रख भावना करनी चाहिए कि *ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने*– अर्थात् हे अग्नि तू ऊपर की ओर बढ़, ***प्रतिजागृहि***– अत्यन्त प्रदीप्त हो, क्योंकि– ***त्वमिष्टापूर्ते संसृजेथाम्*** – अर्थात् तुम हमारे लिए इष्ट अर्थात् अभीष्ट सिद्धि, इष्ट भोगों के दाता हो, तुम हमारी समस्त इष्टियाँ– यज्ञयागादि– के साधक हो और आपूर्त अर्थात् कुंआ, बावड़ी, तालाब, उद्यान, गृह, भवन आदि की पूर्ति करने वाले अर्थात् उनको भरने, पूर्ण करने वाले हो।

चतुर्थ क्रिया ३ समिधादान चार मन्त्रों से ३ अग्नियों के लिए यज्ञ की आधारभूत प्रक्रिया से पूर्वोक्त मन्त्र में समिधा का कार्य प्रथम है। अतः अग्नि प्रदीप्त होने पर उसमें समिधादान की क्रिया करनी चाहिए। अतः ४ मन्त्रों से ३ समिधादान की क्रिया का विधान किया गया है। ४ मन्त्र चारों दिशा अर्थात् समस्त दिशाओं के बोधक हैं। उन समस्त दिशाओं का पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौ या भूः, भुवः, स्वः इन तीन रूप से विभाग है। इन तीन स्थलों में तीन प्रकार की अग्नियाँ हैं। पृथिवी लोक की अग्नि को पवमान कहा गया– अन्तरिक्ष लोक की अग्नि को पाबक कहा गया और द्यु स्थानीय अग्नि को शुचि कहा गया है। अतः तीनों अग्नियों के लिए ३ समिधादान की क्रिया का विधान किया गया। इन तीनों समिधाओं द्वारा इस स्थापित यज्ञाग्नि को तीनों लोकों में क्रियाशील करके यज्ञ को ब्रह्माण्ड में व्याप्त किया जाता है। समिधादान के चार मन्त्रों के अन्त में जो– ***इदं न मम*** – का पाठ है वह ध्यान देने योग्य है। प्रथम मन्त्र में ***इदमग्नये जातवेदसे***, द्वितीय मन्त्र में ***इदमग्नये***, तृतीय मन्त्र में– प्रथम मन्त्रवत् पाठ है और चतुर्थ मन्त्र में ***इदमग्नये अङ्गिरसे*** – पाठ है। अर्थात् तीन ही अग्नि हैं। एक अग्नि, दूसरी अङ्गिरस, तीसरी जातवेद। अतः तीन अग्नियों की समिधा हुई।

पांचवी क्रिया पांच घृत आहुतियां–

समिधाग्नि दुवस्यत, इसके बाद– ***घृतैर्बोधयतातिथिम्*** – पद है। पहले पद *समिधाग्निं दुवस्यत* के अनुसार समिधादान की क्रिया सम्पूर्ण हो गई अतः *घृतैर्बोधयतातिथिम्* – की क्रिया होनी चाहिए। अतः ५ घृताहुतियों का विधान किया गया।

पांच घृताहुति क्यों? (१) –

इस ब्रह्माण्ड में पूर्वोक्त तीनों लोकों में तीन अग्नियों से तथा तीन लोक रूपी समिधाओं से ५ अग्नियां क्रियाशील होती हैं। उससे सबकी रचना व पालन होता है। उपनिषदों में तथा शतपथब्राह्मण में उसे पञ्चाग्नि कहकर वर्णन किया है। अतः पांच अग्नियों के लिये ५ घृताहुति का एक कर्म रखा गया है।

पांच घृताहुति क्यों? (२) –

जगत् पर दृष्टिपात करें तो यह पांच भौतिक ही है। प्राणिजगत् को देखें तो यह पांच प्राणों से ही जीवित है और मनुष्य की प्रधान रूप से पांच ही कामनाएं– प्रजा, पशु, ब्रह्म, तेज, अन्न (भोजन) एवं उपभोग शक्ति है। पंच घृताहुति मन्त्र में ही इन्हीं पांच से अपने को समिद्ध एवं समृद्ध करने की यज्ञ से प्रार्थना है। अतः ५ घृताहुति का विधान यज्ञ में करने से पंच, भूत, पंच प्राण के लिए आहुति से उनकी पुष्टिपूर्वक अपनी पंच सूत्री योजना की पूर्ति का भाव है।

षष्ठक्रिया जलसिंचन –

पंच घृताहुतियों से जब हमने अग्नि को– ***इध्यस्व वर्धस्व*** किया तो अग्नि से उस स्थान विशेष में तापाधिक्य होगा ही। ताप की वृद्धि से उस तृप्त वायुमण्डल की परिधि के बाहर चारों ओर का जो वायु का आचरण होगा वह अपेक्षाकृत अर्द्रतापूर्ण होगा। अर्थात् ताप के चारों ओर आर्द्रता का मण्डल स्वभावतः संचित या निर्मित होता है इसी रहस्य को यज्ञ में भी प्रकट करने के लिए पांच घृताहुतियों के पश्चात् जलसिंचन का विधान है। अर्थात् सृष्टि की कार्य प्रणाली में अग्नि होने पर, ताप होने पर जल अवश्य प्रकट होता है। उपनिषद्कारों ने इसीलिए ***अग्नेरापः*** = अर्थात् अग्नि से जल की उत्पत्ति कहा है। हमारे शरीर में भी जब अग्नि–ताप बढ़ जाता है तो जल से ही उसना शमन सन्तुष्टि होती है। अग्नि में यदि जल डालेंगे तो अग्नि शान्त हो जायेगी। अग्नि को तो प्रदीप्त रखना है, अतः अग्नि के चारों ओर जल सिंचन

करके जल का मण्डल बनाकर, ताप के चारों ओर आर्द्रता स्थापित एवं उत्पन्न हो जाती है। जो सृष्टि विज्ञान के स्वरूप का प्रदर्शन ही है।

सप्तमक्रिया–आघारावाज्य आहुतियां

जल सिंचन के पश्चात् – ***अग्नये स्वाहा*** – की आहुति से सोम की उत्पत्ति होती है। क्योंकि ताप के साथ जलीय अंश मिश्रित होने लगा। उस उत्पन्न सोम के लिए आहुति ***सोमाय स्वाहा*** – से देनी चाहिए। इन दोनों अग्नि और सोम शक्तियों से प्रजनन अर्थात् प्रजापति शक्ति और बल पराक्रम अर्थात् इन्द्र शक्ति का सृष्टि में संचार होता है। इसी को ***प्रजापतये स्वाहा*** – और ***इन्द्राय स्वाहा*** – के रूप में आहुति देकर सृष्टि में इन शक्तियों को सामर्थ्यवान् बनाया जाता है।

यज्ञ प्रातःकाल एवं सायंकाल करना चाहिए –

सृष्टि में अग्नि और सोम का उद्‌गम तथा उनकी परस्पर में आहुतियां प्रातःकाल सूर्योदय होने पर प्रारम्भ होने लगती है जिससे प्रजापति एवं इन्द्र शक्ति सामर्थ्य का वर्धन होता है। वही क्रम सायंकाल भी होता है। जब सृष्टि में प्रकृति का यह यज्ञ प्रारम्भ हो तो हमें भी अपना यज्ञ सूर्योदय एवं सूर्यास्त समय में करना चाहिए। अहोरात्र की सन्धियों में किया गया यज्ञ अहोरात्र में व्याप्त हो जाता है।

यज्ञ की २४ आहुतियों का काल से साम्य –

यज्ञ में २४ आहुतियां हैं। काल भी अहोरात्र रूप से २४ घण्टों के रूप में विभक्त है। २४ घण्टों का अहोरात्र का काल है। प्राचीन ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से ६० घटिका (घड़ी) का अहोरात्र होता है। जिससे एक घड़ी २४ मिनट की हो जाती है। इस प्रकार दैनिक यज्ञ का सम्बन्ध जहां सृष्टि के तत्वों से है वहां साथ ही अहोरात्र के काल से भी है। इस प्रकार काल सृष्टि से भी यज्ञ गायत्री स्वरूप में स्थित है।

अष्टम क्रिया प्रातःकालीन होम को ४ आहुतियां–

इस प्रकार से यज्ञ पृथिवी के अन्तरिक्ष को क्रियाशील करता हुआ द्यु लोकस्थ अग्नि अर्थात् सूर्य से सम्बन्ध स्थापित करता है जिससे अग्नि में दी गई आहुतियां सूर्यमण्डल में पहुंचती हैं। उस समय ***सूर्यो ज्योतिर्ज्योति सूर्यः स्वाहा***– आदि मन्त्रों से ४ आहुतियां दी जाती हैं।

नवम क्रिया ४ व्याहृति आहुतियां –

सूर्य मण्डल को प्राप्त आहुतियों से इस त्रिलोकी में बस भूः, भुवः, स्वः लोकों में अग्नि, वायु और आदित्य से प्राण, अपान और व्यान प्रवाह गति करता है। अतः ***भूरग्नये प्राणाय स्वाहा*** – आदि ४ मन्त्रों की आहुतियों का विधान किया गया है। इस प्रकार सृष्टिक्रिया विज्ञान रहस्य की प्रक्रिया के बोध के लिए यज्ञ का अनुष्ठान समादरणीय प्रतीत होने लगता है।

दशम क्रिया आपो ज्योति० मन्त्र से आहुति –

यज्ञ की पूर्वोक्त प्रक्रिया अब हमें परम लक्ष्य की ओर भी ले जाती है। सृष्टि में जो यज्ञ चल रहा है उसका संचालक परब्रह्म ओ३म् ही है। जल और अग्नि (तेज ज्योति) ही इस विश्व में प्रधान रूप से कार्य कर रहे हैं। वृक्ष, वनस्पति, अन्न, फलादि में इन दोनों के कारण रस उत्पन्न हो रहा है। अर्थात् ***आपो ज्योति रसः*** यह क्रम चल रहा है और उस रस में– अमृतं– जीवन विद्यमान है। अतः मन्त्र– ***आपो ज्योति रसो अमृतम्*** इस क्रम से अमृत के सञ्चार करने वाले जीवनदाता– ब्रह्म की ओर बढ़ने को कहता है। वही सर्वाधार, सर्वव्यापक, सब सुखों का दाता, सब दुःखहर्ता, सर्वरक्षक भूः, भुवः, स्वः इन तीनों लोकों में ऋग्यजुः साम में व्याप्त ओ३म् परम लक्ष्य है। उसे प्राप्त करने के लिए ***ओ३म् आपो ज्योति रसो अमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् स्वाहा***– मन्त्र से आहुति का विधान किया है। यह यज्ञ प्रक्रिया सृष्टि विज्ञान के माध्यम से अन्ततोगत्वा परब्रह्म तक हमें ले जाती है। आध्यात्म पक्ष में आपः ही श्रद्धा है उससे उत्तरोत्तर सूक्ष्मता प्रकाश आनन्द अमृत, (मोक्ष सुख) ब्रह्म की प्राप्ति, ब्रह्म के भूर्भुवः स्वः भर्ग की प्राप्ति होती है। जिससे जीवन उन्नत होता है।

ग्यारहवीं क्रिया ३ याचनायें प्रभु से –

इस सम्पूर्ण यज्ञ की क्रिया के करने के उपरान्त ३ मन्त्रों से निम्न याचनायें की गई हैं–

(१) ***यां मेधां देवगणाः–*** इस मन्त्र में मेधावी करने की याचना।

(२) ***विश्वानि देव*** – इस मन्त्र से सर्व दुःखादि दूर और कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव की प्राप्ति की याचना।

(३) ***अग्ने नय सुपथा राये*** – इस मन्त्र से ऐश्वर्य युक्त सुपथ की प्राप्ति की निष्पाप जीवन करने की याचना है जिससे परमात्मा की उपासना, यज्ञादि शुभकर्मों में बार–बार प्रवृत्ति होती रहे। अतः उपरोक्त तीन मन्त्रों से

आहुति का विधान यज्ञ में किया गया है।

बारहवीं क्रिया– पूर्णाहुति –

यज्ञ की यह सौरभ सर्वत्र व्याप्त हो– सभी को इसका शुभ लाभ परमात्मा प्रदान करें और अपना शुभ आशीर्वाद प्रदान करें अतः ***ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा।*** मन्त्र को तीन बार बोलते हुए तीन आहुतियां प्रदान की जाती हैं। ओ३म् भूर्भुवः स्वः कहकर जिस यज्ञाग्नि को प्रदीप्त किया था जो तीन प्रकार की हैं तीनों लोकों में व्याप्त है उसी के लिए अन्त में पुनः आहुतियों से यज्ञ क्रिया पूर्ण ही जाती है।

यज्ञ महाविज्ञान है –

इस दृष्टि से देखने पर यज्ञ सृष्टि विज्ञान, प्रकृति विज्ञान, मनोविज्ञान, आध्यात्म विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, वायुमण्डल शोधन विज्ञान आदि अनेक विद्या विज्ञानों से ओत–प्रोत है। अतः यज्ञ महाविज्ञान् है। इस संक्षिप्त लेख में इसका कुछ लाभ प्रदर्शित किया है आशा है पाठकगण इस यज्ञ कार्य में रुचि–ग्रहण कर यज्ञ को अपनायेंगे। ********************************

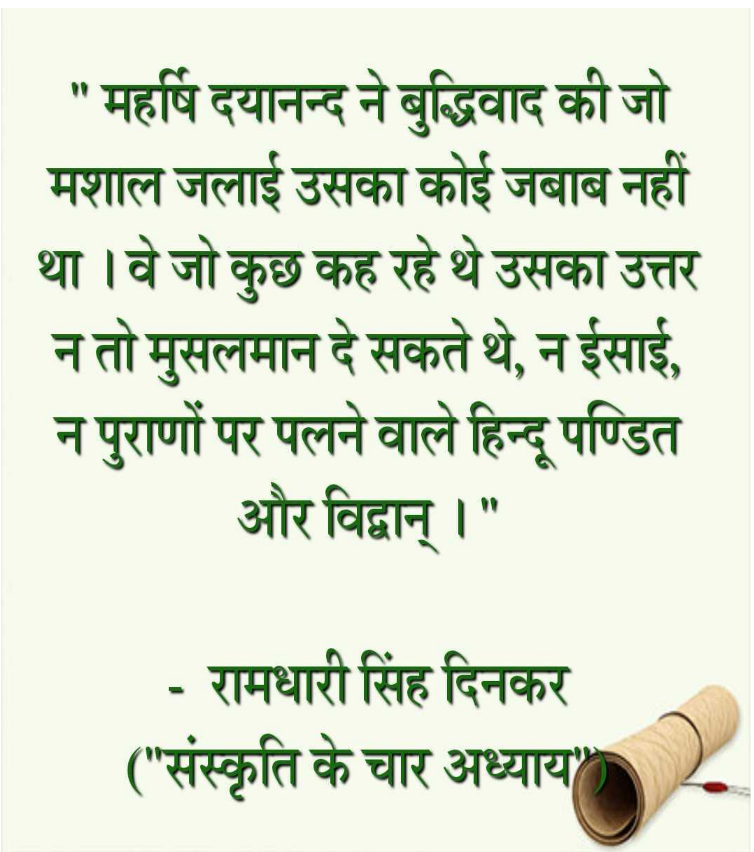

विद्वानों का संग

- देवयज्ञ के दो भाग हैं –

(१) दैनिक अग्निहोत्र= दैनिक यज्ञ;

(२) विद्वानों का संग एवं सेवा।

- दैनिक यज्ञ से रोगाणु मरते हैं, वायु-जल शुद्ध होते हैं, शारीरिक दुर्गन्ध का पाप दूर होता और मनुष्यों-प्राणियों-वृक्षों के लिए स्वास्थ्यवर्धक वायु प्राप्त होती है।
- हवन करते समय मन्त्र पढ़ने में भी एक प्रयोजन है; मन्त्रों में वह व्याख्यान है कि जिससे हवन करने के लाभ विदित हो जाएँ और मन्त्रों की आवृत्ति होने से वेद कण्ठस्थ रहें; वेदों का पठन-पाठन और रक्षा भी हो।

(२) *विद्वानों का संग एवं सेवाः–*

ऋग्वेद (५.५१.१५): 'जानता सं गमेमहि' अर्थात् 'हम विद्वानों की संगति करें'।

- विद्वान् व्यक्ति वेदशास्त्र का ज्ञाता होता है; उसकी संगति में हम शास्त्रवचन सुन-सुनकर धर्म को जान लेते हैं, कुबुद्धि को त्याग देते हैं, ज्ञान-विवेक और मोक्ष तक पा लेते हैं। आचार्य चाणक्य कहते है –

श्रुत्वा धर्मं विजानाति
श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम्।
श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति
श्रुत्वा मोक्षमवाप्नुयात्।।

- विद्वानों का संग बड़े दुःख को छोटा कर लेने, छोटे को सह लेने, दुःख को सुख में बदल लेने और सुख को बढ़ा लेने के सूत्र समेटे रहता है, जो हमें भी मिल जाते हैं।
- विद्वानों का संग जीवन के अनुपात नहीं बिगड़ने देता और सुख में बहकने एवं दुःख में टूटने से बचाए रखता है।
- विद्वानों का संग हमें मोह-जाल में फँसने और कर्मों में लिप्त होने से भी बचाता है।

अतः हम सबको वेद के विद्वानों का संग सद्भावपूर्वक करना चाहिए।

– आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक'

हमको अभी दूर तक चलना है

–✍ वेद कुमार दीक्षित
देवास (म.प्र.)

अपना इतना सा परिचय, हम आर्ष क्रांति के ग्राहक हैं।
परिवर्तन की इस मशाल के, हम ही तो संवाहक हैं।
इसके पावन उद्देश्यों में, अपनी पूरी निष्ठा है।
वेद ,सत्य और धर्म, न्याय की, करनी पुनः प्रतिष्ठा है।
चलते-चलते पैर थकें, या मन भी थकने वाला हो।
लक्ष्य दूर हो, गति मन्थर हो, पथ में नहीं उजाला हो।
बाधाओं के अगणित पर्वत, चाहे रस्ता रोके हों।
प्रलोभनों के माणिक - मोती चाहे पग - पग बिखरे हों।
लेकिन बढ़ते रहने का अब निश्चय नहीं बदलना है।
अभी रुको मत राही, हमको अभी दूर तक चलना है।।

जिनसे रोगी था समाज, अब वही रूढ़ियां पनप रहीं।
वैदिक-पथ को त्याग संतति, मूढ़ हिरण- सी भटक रही।
संस्कारों का बीजारोपण, कहीं नहीं अब होता है।
आम्र वृक्ष में निम्ब लगे तो, मनुज भाग्य को रोता है ।
बदल दिया इतिहास, आर्ष ग्रंथों को दूषित कर डाला।
नकली ऋषि ज्ञानी- मुनि बनकर, करें ज्ञान का घोटाला।
भारतीय संस्कृति के वैरी, निर्भय यहां विचरते हैं।
भारत की गुरु- गरिमा को, जो रोज कलंकित करते हैं।
ऐसे जहरीले सांपों को, हमको अभी कुचलना है ।।
अभी रुको मत राही, हमको अभी दूर तक चलना है।।

वैदिक वर्ण - व्यवस्था को, फिर से पटरी पर लाना है।
पक्षपात की दीवारों को, फिर से तोड़ गिराना है।
शुद्र नहीं स्पृश्य, द्विजों का, अहंकार यह मिथ्या है।
जन्म - जाति का यह विवाद, बस मानवता की हत्या है।
तन-बल, धन -बल और बुद्धि- बल, निज कर्मों से होता है।
सुख-दुख का सारा प्रपंच, कर्मों से पाता -खोता है।
जो कुछ है गतिमान- दृश्य, उसका आधार विधाता है।
कोई अपने साथ जन्म- से, लेकर कुछ न आता है।
मैं ऊंचा, वह नीचा यह तो, मन की निंदित छलना है।।
अभी रुको मत राही, हमको अभी दूर तक चलना है।।

चार आश्रमों की कुर्सी के, पैरों में घुन लगे हुए।
समय- चक्र में बंधी आयु के, सारे बंधन शिथिल हुए।
बिना योजना, बिना लक्ष्य, जीवन की गाड़ी दौड़ रही।
जन्म- मरण के बीच कर्म की, बनी व्यवस्था बिगड़ रही।
ब्रह्मचर्य की व्रतचर्या, खंडित, दूषित और व्यर्थ हुई।
शुचिता, मर्यादा गृहस्थ की, भोगकुंड में भस्म हुई।
वानप्रस्थ उपहास बना, सन्यास भीख का साधन है।
अकर्मण्यता के पड़ाव दो, जहां घूमता जन-जन है।
इनके शोधन का उपाय ले, घर से हमें निकलना है।।
अभी रुको मत राही, हमको अभी दूर तक चलना है।।

अन्न- वस्त्र- आवास और शिक्षा की चिंता करनी है।
पर्यावरण स्वच्छ - सुंदर हो, उचित व्यवस्था करनी है।
कितने ही दिग्भ्रमित जनों को, संस्कारित भी करना है।
रूठे, बिछुड़े, दूरहुओं का फिर आलिंगन करना है।
वैचारिक मतभेद कभी, सर्वथा नहीं मिट जाते हैं।
आर्य- दस्युओं के रण में ,अपवाद सदा रह जाते हैं।
है कुटुंब वसुधा सारी तो, सबको ही अपनाना है।
मत- पंथों के जालों का, मार्जन फिर क्रमशः करना है।
'आत्मदीप' बन, परहित में ही, प्रतिदिन हमको जलना है।।
अभी रुको मत राही, हमको, अभी दूर तक चलना है।।

विद्या – जिससे ईश्वर से लेके पृथिवी पर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर उनसे यथायोग्य उपकार लेना होता है, इसका नाम विद्या है।

अविद्या – जो विद्या से विपरीत है भ्रम, अन्धकार और अज्ञानरूप है, इसको अविद्या कहते हैं।

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

देश को इसी राह पर चलने की जरूरत है

– संत समीर

उस विचारधारा को याद करने का समय एक बार फिर आ गया है, जिसे पूरी दुनिया प्रकृति के कहर के आगे आज मजबूरी में अपना रही है। इस विचारधारा की नींव आजादी बचाओ आन्दोलन (पूर्व नाम – लोक स्वराज्य अभियान) ने 5 जून, 1989 को इलाहाबाद की धरती पर रखी थी। मूलमन्त्र था- स्वदेशी और स्वावलम्बन। फेसबुक पर कई मित्र उस दौर की यादें ताजा कर रहे हैं तो अच्छा लग रहा है। उत्कर्ष मालवीय ने तब का नारा याद दिलायाकृ'बाटा, लिप्टन, पेप्सीकोला...सब पहने हैं खूनी चोला।' वे कई नारे याद आ रहे हैं, जो तब हमने गढ़े थे और बाद में पूरे देश में गूँजने लगे थे। मसलन... 'देश हमारा माल विदेशी, नहीं चलेगा नहीं चलेगा', 'जागो फिर एक बार, विदेशी का बहिष्कार', अभी तो ये अँगड़ाई है, आगे और लड़ाई है' आदि–आदि।

शुरू में हम बस कुछ गिनती के लोग थे। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के गणित विभाग के तब के अध्यक्ष प्रो. बनवारीलाल शर्मा हमारे अगुआ थे। विश्वविद्यालय के ही एक विभाग 'गान्धी शान्ति एवं अध्ययन संस्थान' (गान्धी भवन) को हमने अपना ठीया बनाया हुआ था। 'स्वदेशी बनाम बहुराष्ट्रीय निगमें परियोजना' नाम देकर हमने एक शोध करना शुरू किया। जो जानकारियाँ बाहर आईं, वे अजब–गजब और चौंकाने वाली थीं। मजेदार कि जिस ईस्ट इण्डिया कम्पनी को खदेड़ने के लिए आजादी की लड़ाई लड़ी गई, वह रूप बदल कर इस देश में दवा बेचने का धन्धा कर रही थी। लोगों को जरा भी अन्दाजा नहीं था कि हिन्दुस्तान लीवर नाम की कम्पनी हिन्दुस्तान की नहीं है। डालडा वनस्पति, सनलाइट, लाइफबॉय, कोलगेट घरों में इस्तेमाल होने वाले सबसे लोकप्रिय उत्पाद थे और देश के ही लगते थे।

बहरहाल, इलाहाबाद के नौजवानों ने बहुराष्ट्रीय विदेशी कम्पनियों के खलिाफ स्वदेशी के आन्दोलन का बिगुल बजा दिया। बात बढ़ने लगी और चीजों को ठीक से सँभालने की जरूरत लगी तो हमने अपनी–अपनी रुचि के हिसाब से काम का बँटवारा कर लिया। कुछ लोग भाषण देने निकले, कुछ जनसम्पर्क पर, तो कुछ साहित्य और पत्रिकाएँ सँभालने लगे। दुर्भाग्य से आजकल के ज्यादातर युवा उस आन्दोलन के सिर्फ राजीव दीक्षित को ही जान पा रहे हैं, जबकि एक बड़ी सङ्ख्या ऐसे कार्यकर्ताओं की है, जिनकी भूमिकाएँ कई मामलों में और भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण रही हैं। वे भाषण नहीं देते थे, तो उनके चेहरे आमजन के सामने नहीं होते थे। दुर्भाग्य यह भी है कि अपने देहावसान के आखिरी दिनों में राजीव जी ने वाग्भट के आयुर्वेद पक्ष पर जो कुछ बोला, तो स्वास्थ्य के मुद्दे के नाते कुछ लोगों ने यूट्यूब पर उसे ही ज्यादा प्रचारित कर दिया। नतीजतन, आजकल ज्यादातर लोग राजीव दीक्षित को डॉक्टर, वैद्य जैसा कुछ समझने लगे हैं, जबकि अर्थव्यवस्था और समाज–व्यवस्था के सवालों पर उनके भाषणों को सुना जाना चाहिए।

शुरू के दिनों का हाल यह था कि ग्लोबल होने की पिनक में सत्ता के कर्ताधर्ता और राजनीति के खिलाड़ी इस विचारधारा का मजाक उड़ा रहे थे कि देश को देश के संसाधनों से आत्मनिर्भर भला कैसे बनाया जा सकता है? बावजूद इसके, आजादी बचाओ आन्दोलन के कार्यकर्ताओं ने अपना जुनून और धुन बनाए रखा। धीरे–धीरे आन्दोलन की धमक यहाँ तक पहुँची कि पेप्सी जैसी कम्पनी बहुत समय तक इलाहाबाद में प्रवेश करने की हिम्मत नहीं कर पाई। युवाओं की एक बड़ी सङ्ख्या थी, जिसने दिन–रात एक कर दिया था। मैंने इतने निश्छल कार्यकर्ता किसी और आन्दोलन या सङ्गठन में आज तक नहीं देखे। जाने कितने लोगों ने पढ़ाई–लिखाई की चिन्ता छोड़ दी थी। मेरी तरह तमाम नौजवानों ने देश के लिए घर–परिवार तक से नाता तोड़ने का मन बना लिया था। आईएएस, पीसीएस का मोह छोड़कर छात्र इसमें शामिल हो रहे थे। इक्का–दुक्का नाम देना उचित

नहीं समझ रहा हूँ। इन सबके नाम बड़े तरतीब से याद करने पड़ेंगे, वरना अन्याय होगा। ये ऐसे नाम हैं, जिनमें आजादी की लड़ाई के क्रान्तिवीरों की छवियाँ मुझे दिखाई देती रही हैं। काश, कुछ लोगों की बेवकूफियों से आन्दोलन खण्डित न हुआ होता, तो आज देश का चेहरा शायद कुछ और दिखाई देता। यह जो अन्ना आन्दोलन और केजरीवाल एण्ड कम्पनी की जलवानुमाई आपने पिछले कुछ वर्षों में देखी...यह पूरा भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन उसी आजादी बचाओ आन्दोलन के टूटते–बिखरते खण्डहर से निकली धारा थी। मुझे वह समय याद आ रहा है, जब हमने मॉरीशस के रास्ते बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा हर साल की जा रही देश के करीब सत्तर हजार करोड़ रुपये की लूट के खलिाफ मुकदमा दायर किया तो अरविन्द केजरीवाल ने बड़ी मेहनत से जरूरी दस्तावेज जुटाने का काम किया था।

आज की तारीख में आजादी बचाओ आन्दोलन को ज्यादा लोग नहीं जानते। नई पीढ़ी को नहीं पता कि यही वह सङ्गठन है, जिसने बहुराष्ट्रीय शब्द दिया ही नहीं, बल्कि इस पूरे मुद्दे को देश की सीमाओं के पार वैश्विक स्तर पर चर्चा के केन्द्र में लाने का काम किया। वे दिन मुझे याद हैं जब इलाहाबाद में आन्दोलन का जलवा अजब ही हो गया था। एक बार हमने घोषणा कर दी कि हम लखनऊ में रैली करेंगे। यह सिर्फ घोषणा भर थी, काम कुछ नहीं किया गया था। लखनऊ पहुँचने वाले गिनती के सिर्फ कुछ सौ लोग थे, पर तब के मुख्यमन्त्री मुलायम सिंह यादव ने हमारी सुरक्षा में हजारों पुलिसकर्मी लगा दिए। बाद में वे मिले और उन्होंने कहा कि यह मेरा दायित्व है, आप लोग अच्छा काम कर रहे हैं मैं आपके समर्थन में हूँ। हमने विचारधारा की कोई जिद नहीं पाली थी। हमारे दरवाजे खुले थे कि जो भी देश–समाज का भला चाहता हो, इस काम में सहयोगी बन सकता है। मार्क्सवादी छात्र सङ्गठन 'आइसा' वगैरह हमारे साथ थे। समाजवादी धारा के जार्ज फर्नाण्डीज, रविराय, सुरेन्द्र मोहन जैसे लोग एक समय में पूरी तरह से राजनीति छोड़कर आजादी बचाओ आन्दोलन में शामिल हो गए थेय पर थे अन्ततः राजनीति के कीड़े, इसलिए चोर चोरी से जाए, पर हेराफेरी कैसे छोड़े...तो बाद में हम लोगों ने मजबूरन राजनीतिक लोगों के लिए आन्दोलन में शामिल होने पर पाबन्दी लगाई। शुरू में विद्यार्थी परिषद के लोग हमारे साथ शामिल होते थे। बाद के दिनों में उन्हीं के जरिये यह मुद्दा आरएसएस तक पहुँचा और हम लोगों ने उनका स्वदेशी जागरण *मञ्च* बनवाने में काफी सहयोग किया। हमारा जितना शोध था, पर्चे–पोस्टर थे, सब उनको उपलब्ध कराया। स्वदेशी जागरण मञ्च के शुरू के जितने भी पर्चे–पोस्टर थे, वे सब आजादी बचाओ आन्दोलन या कहें, लोक स्वराज्य आभियान के पर्चे–पोस्टर थे। उन पर बस हमारा नाम हटाकर स्वदेशी जागरण मञ्च का नाम चस्पाँ कर दिया गया था। हमारा उद्देश्य बस इतना था कि जैसे भी हो, स्वदेशी का मुद्दा देश में प्रचारित होना चाहिए। हमें हर संस्था–सङ्गठन में प्यारे लोग मिले। स्वदेशी जागरण मंच में भी कई प्यारे लोग थे, पर उनकी दिक्कत यह थी वे भाजपा की रीति–नीति पर ही निर्भर थे और कई बार उन्हें अपनी इच्छा के विपरीत चलना पड़ता था।

खैर, बातें यादें बड़ी–बड़ी हैं, पर असली बात है कि मुद्दा महत्त्वपूर्ण है, जिसे आज कुदरत के करिश्मे ने प्रासङ्गिक बना दिया है। मजबूरी में ही सही, इन राजनीतिक घोषणाओं का स्वागत किया जाना चाहिए, पर सिर्फ घोषणाओं से बात नहीं बनती। आजादी बचाओ आन्दोलन जिस समाज–व्यवस्था की बात करता रहा है, उस पर गम्भीरता से सोचा जाना चाहिए। अभी वक्त है, शायद इस दिशा में कुछ काम आगे बढ़ जाय, वरना आदमी कुत्ते की पूँछ से कहाँ कम है! जैसे ही कोरोना का डर खत्म होगा, हम फिर वही प्रकृति–विरोधी रङ्ग–ढङ्ग अपनाना शुरू कर देंगे जिसके खामियाजे के तौर पर इस हस्र तक पहुँचे। तीन दशक पहले की गई आजादी बचाओ आन्दोलन की भविष्यवाणियाँ हूबहू सच साबित हो रही हैं। स्वदेशी–स्वावलम्बन की पटरी से देश के उतरने के नतीजे का परावलम्बन इससे बड़ा क्या हो सकता है? यह रोजगार की कैसी अवधारणा, जो करोड़ों लोगों को पलायन पर मजबूर कर दे और एक अदना–से कोरोना का आतङ्क आते ही विकास के पहियों तले कुचल दे। हजार–हजार किलोमीटर दूर

से इस मुश्किल की घड़ी में किसी भी तरह से अपनी चौखट छू लेने की चाहत लिए लोग पैदल निकल पड़ें और आधी दूरी नापते–नापते दम तोड़ने लगें, तो देश का इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है? स्वदेशी के सहारे स्वावलम्बन का मर्म समझा गया होता तो आज ये दिन देखने की नौबत नहीं आती। विदेशी यात्राएँ भी हम जरूरत भर को करते और इस तरह वहाँ से कोरोना की सौगात लेकर नहीं आते। अगर यह वायरस किसी प्रयोगशाला में विकसित किया गया है, तो भी यही समझिए कि इसके पीछे दुनिया पर व्यापारिक कब्जे की ही मानसिकता काम कर रही है, जो स्वदेशी की अवधारणा में सम्भव नहीं हो सकती थी। स्वदेशी का मतलब सिर्फ यह नहीं है कि विदेशी के बजाय देशी सामान खरीद लिया जाय। स्वदेशी एक पूरी विचारधारा है, जो हर तरह के शोषण के विरुद्ध समाज को आत्मनिर्भर बनाती है। स्वदेशी की समझ हमारे सत्ताधीशों को हो जाए तो बेरोजगारी की समस्या का समाधान आसान हो जाएगा। स्वदेशी समाज के रिश्ते मजबूत करती है और खुद की अस्मिता से गुजरते हुए 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को सही मायने में चरितार्थ करती है।

मैं यही कह सकता हूँ कि हर सोचने–समझने वाले व्यक्ति को अपनी चिन्तनधारा में इसे शामिल करना चाहिए और आवाज उठानी चाहिए कि आखरि इस देश को हमें किस रास्ते पर आगे ले जाने की जरूरत है। शिद्दत से याद करना चाहिए कि देश की आबादी वही है, पर लॉकडाउन के इस कोरोना–काल में सिर्फ हमारी हरकतें बदलीं कि नदियाँ, हवा, आसमान... सब मुस्कराने लगे। इतना साफ–सुथरा प्रदूषणमुक्त पर्यावरण तथाकथित विकास–काल में इसके पहले कभी नहीं देखा गया था। मैं महानगर की इस घनी आबादी में कई दिनों से देर शाम कोयल की कूँक सुन रहा हूँ। साफ–सुथरे आसमान में तारे गिनने के दिन जैसे फिर लौट आए हैं। मतलब साफ है, समस्या आदमी की आबादी से नहीं, उसकी हरकतों से है। हरकतें राह पर हों तो प्रकृति जीवन के रास्ते में कभी बाधा नहीं खड़ी करती, क्योंकि प्रकृति की प्रकृति बुनियादी रूप से जीवनोन्मुखी है। चिकित्साविज्ञानी भी कहते हैं कि साफ हवा और सूरज की रोशनी संसार के सबसे बड़े एण्टीवायरल उपादान हैं। इनका संयोग सही रहे तो कोई भी वायरस जीवन के लिए खतरनाक नहीं हो सकता। आहार–विहार के साथ प्रदूषण रोग–प्रतिरोधक शक्ति में पलीता लगाने का सबसे बड़ा कारक है। याद रखने की बात है कि अगर आदमी ने अपनी हरकतों से जहरीला न बना दिया हो तो, जङ्गल के साफ पर्यावरण में किसी जीव–जन्तु को कभी डॉक्टर और अस्पताल की जरूरत नहीं पड़ती।

कुल बात यह कि क्या हमारे रहनुमा कोरोना को सचमुच प्रकृति का सबक मान पाएँगे और देश को विकास के सही रास्ते पर ले जाने का काम कर पाएँगे... या कुछ दिनों बाद हम फिर उसी भेड़चाल में शामिल होने को अभिषप्त होंगे? महाबली अमेरिका के घुटने टेक देने के बाद भी प्रकृति को जीत लेने का हमारा दम्भ अगर कम न हो तो क्या किया जा सकता है! प्रकृति का क्या, वह खुद को सन्तुलित करना जानती है। कहीं ऐसा न हो कि एक दिन कोरोना से हजार गुना खतरनाक वायरस आए और सूरज, चाँद, सितारों की तमाम दूरियाँ नापते रहने के बावजूद हमारा सारा हिसाब–किताब बराबर कर जाए।

लोकल पर वोकल होइए और इसे ग्लोबल बनाइए... यह सन्देश अच्छा है, पर महज नारा बनकर न रह जाए तो। बीस लाख करोड़ का पैकेज भी लोगों का सहारा बन सकता है, पर इसका भी सही इस्तेमाल हो तो। अभी का हाल यह है कि हरेक कोरेण्टाइन व्यक्ति पर हर दिन के लिए छह हजार रुपये की रकम तय की गई है, पर कई इलाकों में मरीज के माँगने पर पीने का साफ पानी तक नहीं दिया जा रहा। यह सच है कि इस कठिन समय में इस देश के लाखों कर्मचारियों और नौकरशाहों ने मुश्तैदी से अपना कर्तव्य पालन किया है, आमजन की मदद की है, पर ऐसा भी हो रहा है कि मौतों की बिना पर तमाम अफसर अपनी जेबें भरना ज्यादा जरूरी समझ रहे हैं। सवाल उठना स्वाभाविक है कि बीस लाख करोड़ के पैकेज का ज़्यादा हिस्सा नेताओं, अफसरों की मौज–मस्ती में काम आएगा या आमजन का सहारा बनेगा? इस बात को ठीक से सोचते–विचारते हुए हमारे प्रधानमन्त्री आगे बढ़ेंगे तो सचमुच देश का भला हो सकता है; अन्यथा आम आदमी की नियति में बदहाली और मौत लिखने के लिए सत्ता की कुर्सी पर ब्रह्मा बैठे ही हैं। *********

****

महाराणा प्रताप के पूर्वजों की शौर्यगाथा

– प्रियांशु सेठ
वाराणसी (उ.प्र.)

सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी राजाओं की सन्तान ही राजपूत लोग हैं। मेवाड़ के शासनकर्त्ता सूर्यवंशी राजपूत हैं। ये लोग सिसोंदिया कहलाते हैं; जो श्रीरामचन्द्र जी के पुत्र लव की सन्तान हैं। वाल्मीकि रामायण में आया है कि श्रीराम जी ने अपने अन्तिम समय लव को दक्षिण कौशल और कुश को उत्तर कौशल का राज्य दे दिया था। कर्नलटाडसाहब की राय है कि मेवाड़ के वर्तमान शासनकर्त्ता के वंश के पूर्वज राजा कनकसेन ने ही पहले पहल जननी जन्मभूमि का त्याग किया था और इसी के किसी बेटे पोते ने सौराष्ट्र और बलभीपुर में अपने राज्य की नींव डाली थी। जिस समय शिलादित्य नामक राजा बलभीपुर में राज्य करता था, उस समय इन्होंने बलभीपुर पर आक्रमण करके उसको नष्ट–भ्रष्ट कर दिया था। युद्ध में बेचारा राजा भी काम आया। इसकी रानी पुष्पवती गर्भवती थी। सन्तान की रक्षा के विचार से इसने एक गुफा में शरण ली। वहीं इसके गर्भ से एक पुत्ररत्न पैदा हुआ, जो गुह नाम से प्रसिद्ध हुआ। मेवाड़ के राजपूत लोग गुह के वंशधर होने के कारण *गुहलौत* कहलाते हैं। बहुत समय के बाद इसी राजा गुह के वंश में नागादित्य नाम का एक राजा हुआ जिसका पुत्र बप्पारावल अपनी वीरता से सर्वत्र विख्यात हुआ। बप्पारावल की वीरता की जितनी भी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। क्योंकि बप्पा सिर्फ चित्तौड़ के किले पर अपना झण्डा फहरा कर चुप नहीं हो बैठे थे, बल्कि अपनी अद्वितीय वीरता से इन्होंने कंधार, काश्मीर, ईराक, ईरान, तेहरान और अफगानिस्तान इत्यादि पाश्चात्य मुल्क के बादशाहों को भी जीत कर अपने आधीन कर लिया था। बप्पा रावल का असली नाम भोज था। किन्तु प्रजा इन्हें पिता के तुल्य मानती थी। यही कारण है कि वह बप्पा के नाम से विख्यात थे। बप्पा जब चित्तौड़गढ़ के गद्दी पर बैठे तो इनकी उम्र चौदह या पन्द्रह वर्ष से अधिक न थी। अतः इन्हीं के वंशधरों के हाथ में अब तक मेवाड़ के शासन की बागडोर चली आती है। डूंगरपुर, प्रतापगढ़ और बांसवाड़े पर भी अब तक इन्हीं की सन्तानों का अधिकार है। बप्पारावल की नवीं पीढ़ी में रावल खुमान बहुत ही विख्यात राजा हुए। इन्होंने खुरासान के एक आक्रमणकारी के दांत ऐसे खट्टे किए थे कि जिसे संसार देखकर चकित हो गया था। रावल खुमान के पश्चात् प्रसिद्ध राणा समरसिंह हुए। इस समय राजपूतों में आपसी अनबन और फूट की आग सुलग रही थी। जब भारतवर्ष को गुलामी की बेड़ियों में जकड़ने वाले राजपूत कुलकलंक कन्नौज के राजा जयचन्द के संकेत से शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली के अन्तिम हिन्दू राजा पृथ्वीराज की राजधानी दिल्ली पर आक्रमण किया था उस समय युद्ध के मैदान में राणा जी ऐसी बहादुरी से लड़े कि दुश्मन लोग भी उनकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सके। इनका पुत्र कल्याणसिंह यवनों से लड़ता हुआ इनकी आंखों के सामने मारा गया था। इसके बाद इन्हें महाराजा पृथ्वीराज के मारे जाने का समाचार मिला। पर यह सुनकर भी इन्होंने अपने कर्त्तव्य से मुंह न मोड़ा और युद्ध में डंटे रहे। जिधर निकल जाते उधर ही दुश्मनों को विध्वंस धराशायी कर देते थे। अन्त को आप भी इसी युद्ध में काम आये, और संसार को यह दिखा गए कि सच्चे वीर लोग किस प्रकार अपने कर्त्तव्य का पालन अन्तिम श्वास तक करते रहते हैं।

राणा समरसिंह, राजा पृथ्वीराज के बहनोई थे। इनके बाद एक–एक करके बहुत से राणा लोग मेवाड़ के सिंहासन पर बैठे। सन् १२७५ ई० में राणा लक्ष्मणसिंह गद्दी पर बैठे। उस समय वह नाबालिग थे; अतः राज्य के कठिन कार्यभार को संभालने योग्य नहीं थे और इस कारण इनके चाचा महाराणा भीमसिंह राज्य को संभालने और उचित रीति से इसका प्रबन्ध करने लगे। भीमसिंह की रानी पद्मिनी बड़ी ही रूपवती थी, साथ ही धर्मपरायण वीरांगना भी थी। अलाउद्दीन खिलजी इस समय दिल्ली का बादशाह था। इसने भी पद्मिनी की सुन्दरता का हाल सुना और अपने नापाक इरादों के कारण इसे बेगम बनाने

का निश्चय किया। बस! फिर एक भारी मुगल सेना के साथ वह चित्तौड़ पर चढ़ आया। किन्तु वीर राजपूतगण अपने राजा और रानी के लिए ऐसी वीरता से लड़े कि वह चित्तौड़ को विजय न कर सका। तब उसने अपनी प्रबल इच्छा जताई और कहा कि मैं एक बार रानी पद्मिनी को देख लूं। यदि मेरी बात मान ली जाएगी तो अपने लाव लश्कर सहित मैं दिल्ली लौट जाऊंगा। भीमसिंह ने उत्तर दिया कि प्रत्यक्ष तो मैं पद्मिनी को दिखा न सकूंगा। किन्तु हां, एक आइना उसके सम्मुख इस प्रकार रख दिया जाएगा कि जिसमें से पद्मिनी का चेहरा उसे बखूबी दिखलाई दे। किन्तु वह स्वयं सामने न आयेगी, साथ ही यह भी शर्त रहेगी कि चित्तौड़ के भीतर वह केवल दो एक शरीर रक्षक के साथ आ सकता है। अलाउद्दीन ने उसकी यह बात मान ली, क्योंकि वह जानता था कि राजपूत अपनी बात के बड़े धनी होते हैं। अतः वह दो एक आदमियों के साथ किले में चला गया और आईने में से पद्मिनी का चेहरा देख लिया। महाराणा भीमसिंह, बादशाह को किले के बाहर तक पहुंचाने चले आये, किन्तु ज्योंही वह बाहर निकले त्योंही तुर्की फौज का एक बेड़ा जो अलाउद्दीन के हुक्म से जंगल में छिपा हुआ था, घात पकड़ झपट कर निकला और भीमसिंह को छल से पकड़ कर कैद कर लिया। तब अलाउद्दीन ने कहा कि जब तक पद्मिनी अपने आप मेरे पास आकर मुझसे शादी न कर लेगी मैं राजा को नहीं छोडूंगा।

पद्मिनी पहले तो कुछ डरी, किन्तु थी वह बड़ी साहसी। उसने कहा– "मालूम हुआ तुर्कों में भी अपने वचन की आन नहीं है। इन्होंने हमें धोखा दिया है। बस इसका जवाब तुर्की ब तुर्की देना ही ठीक है। इसलिए उसने कहला भेजा कि यदि बादशाह राजा को छोड़ दे तो मैं अलाउद्दीन की बेगम बनने को खुशी से चली आऊंगी। मुझे अपनी समस्त दासियां और वस्त्राभूषण बन्द पालकियों में ले जाने की आज्ञा हो इसलिए कि जिसमें तुर्क सिपाही मुझे देख न सकें।" अलाउद्दीन ने यह बात स्वीकार कर ली। अब इधर पद्मिनी की पालकी किले से बाहर निकली। हर एक का ख्याल था कि इसमें रानी पद्मिनी है, किन्तु उसके स्थान में पालकी के भीतर एक बादल नाम का राजपूत बैठा हुआ था जिसके साथ–साथ सत्तर पालकियां और भी गयीं। तुर्क समझे कि इनमें दासियां, बांदियां और आभूषण आदि हैं, लेकिन हर एक में एक–एक राजपूत सिपाही सशस्त्र तैयार बैठा हुआ था। पालकी उठाने वाले भी कहार नहीं थे, बल्कि वास्तव में हर एक वीर राजपूत सिपाही ही थे। फिर पद्मिनी के चाचा वीर गीरा ने अलाउद्दीन से निवेदन किया कि पद्मिनी अपने पति से अन्तिम मुलाकात और उससे विदा होना चाहती है। यह सुनकर खिलजी को प्रसन्नता हुई। उसने कहा– भीमसिंह इस खेमे में बैठा है, रानी उससे मुलाकात कर सकती है। तब पालकी खेमे में ले गए, बादल बाहर निकला और उसके साथ लाए अंगकवच को भीमसिंह ने पहन लिया। भीमसिंह झट एक घोड़े पर सवार हुए और क्षण भर में पद्मिनी के रक्षार्थ उसके पास कुशलपूर्वक पहुंच गए। इधर तुर्कों और राजपूतों में घमासान लड़ाई हुई, जिसमें थोड़े ही राजपूत जीवित वापस पहुंचे। उन जीवित राजपूतों में एक बड़ा ही शूरवीर राजपूत बादल था। फिर अलाउद्दीन ने किले पर आक्रमण किया लेकिन सफल मनोरथ न हो सका इसलिए लाचार दिल्ली चला गया। साल दो साल बाद अलाउद्दीन ने पुनः अफगानियों और तुर्कों की बड़ी भारी फौज जमा कर ली और एकदम चित्तौड़ पर चढ़ आया। भीमसिंह अपने जाति के बहुत से मनुष्यों को नगर रक्षा करने में पहले ही गंवा चुके थे। जो राजपूत बाकी बच रहे थे वह सच्चे वीर और राजभक्त तो अवश्य थे परन्तु तुर्कों की सेना का सामना करने में असमर्थ थे। छः महीनों तक यह युद्ध चलता रहा। दिन पर दिन राजपूत वीर मातृभूमि के लिए अपना सिर बलिदान करते जाते थे। इस प्रकार इधर राजपूत घट रहे थे और उधर तुर्की सेना दिल्ली से आकर बढ़ती जाती थी।

महाराणा के बारह बेटे थे। दूसरे दिन इनमें से सबसे बड़े बेटे के सिर पर सरपेच बांधा गया। इसने तीन दिन तक राज्य किया। और चौथे दिन मारा गया। इसी प्रकार बाकी में से प्रत्येक बारी–बारी से गद्दी पर बैठे। और हरेक तीन दिन तक राज्य करते हुए तुर्की की अथाह सेना से परास्त होकर मारे गए। होते–होते ग्यारह मुकुटधारियों का प्राण विसर्जन हो

चुका और सबसे छोटा भाई बाकी रह गया। तब राजा ने अपने सामन्तों को अपने पास बुला करके कहा– ***अब चित्तौड़ के लिए मैं अपनी जान देता हूं। अब इस बार मेरा ही सिर रणभूमि पर गिरेगा...।*** अब भीमसिंह ने इस बार छोटा सा व्यूह बड़े शूरवीर सिपाहियों का रचकर तैयार कर लिया। अपने सबसे कनिष्ठ पुत्र को इस व्यूह का सेनानायक नियत कर लिया और कहा– ''पुत्र! बस जाओ, तुर्कों से अभेद्य सेनादल को बेध कर अपना मार्ग निकाल लो। इनसे बचकर यहां से केवलगढ़ में चले जाओ और वहां मेवाड़ के राजा बनकर उस समय तक राज्य करो कि जब तक तुम में चित्तौड़ वापस लौट आने की पूरी शक्ति न आ जाये।'' कुमार तो पहले जाने पर राजी नहीं हुए और कहने लगे– ''नहीं पिताजी! मैं यहीं रहूंगा और शत्रु को मारकर पिता के साथ–साथ समर भूमि में प्राण गवाऊंगा।'' किन्तु भीमसिंह ने न माना और कहा– क्या अपने वंश का एकबारगी नामोनिशान मिटाना चाहते हो? नहीं ऐसा कभी न होगा। पुत्र! तुम इसे कायम रखो। कुंवर ने लाचार होकर राजा की आज्ञा का पालन किया। अतः उसने और उसके साथियों ने दुश्मन की अथाह सेना को चीरते हुए अपना रास्ता साफ कर लिया। इसके बाद इसके खानदान में से एक व्यक्ति बहुत दिन के पश्चात् पुनः चित्तौड़ का राणा बनकर वापस लौट आया। ****************

आर्ष क्रान्ति पत्रिका के लिए आर्य लेखक बन्धु अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ भेंजे।

माता

सुख का सुंदर छाता

प्रथम गुरु सर्वोत्तम शिक्षक, जग विख्यात है माता।
वेद, उपनिषद, रामायण भी, गाथा इनकी गाता।।
गर्भाधान से पहले ही, निज कोख सजाती तप से।
धर्म का अंकुर धर देती है, ओम नाम के जप से।
पतिव्रता बन सिर्फ पति संग पूर्ण समर्पण नाता।।
जग विख्यात है माता -----।

जब तक विद्या पूरी न हो, तबतक देती शिक्षा।
आंचल की शीतल छाया से, देती सदा सुरक्षा।
यज्ञ भावना भर देती, तब स्वर्ग धरा पर आता।।
वेद, उपनिषद, रामायण -----।

धन्य–धन्य हो जाता कुल, गर माता धार्मिक विद्वान्।
संस्कारों के द्वारा होता, उस घर मे उत्तम सन्तान।
मान्य बड़ो का स्नेह सभी से, हर बालक कर पाता।
वेद, उपनिषद, रामायण -----।

शक्ति, श्री, लक्ष्मी, सरस्वती, का गुण इनके अंदर।
हृदय भरा है मित्र भाव से, जैसे धरा समुन्दर।
सन्तानों का सुख संवर्द्धन, इनको सदा सुहाता।।
वेद, उपनिषद, रामायण -----।

घर को स्वर्ग बनाना है, तो माता का सम्मान करो।
देवतुल्य इस जग्जननी का, कभी नहीं अपमान करो।
''संजय'' पर उपकार करो,''माँ''सुख का सुन्दर छाता।।
वेद, उपनिषद, रामायण -----।

–✍ आचार्य संजय सत्यर्थी
आर्योपदेशक, बिहार
सं०सूत्र – 90066668

महात्मा बुद्ध और वैदिक कर्मफल व्यवस्था

- ✍ कार्तिक अय्यर

कुछ वामपंथी भीमसैनिक मानते हैं कि पुनर्जन्म, परलोक आदि सब गप्प है। शरीर नष्ट होने के बाद आत्मा खत्म हो जाता है। किसी को किसी कर्म का फल नहीं मिलता आदि आदि। परन्तु भगवान बुद्ध वैदिक कर्म फल व्यवस्था मानते थे।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।
(यजुर्वेद ४०/२)

''शास्त्र नियमति कर्म करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिये। इस प्रकार मनुष्य कर्म से लिप्त नहीं होता, इससे भिन्न कोई मार्ग नहीं है, जिससे कर्मबंधन से मुक्त हो सके।''

भगवद्गीता २/५०,५१ और ५/१० में भी यही लिखा है।

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः
जन्मबंधविनिर्मुक्ताः पदं गच्छंत्यनायम्।।
(गीता २/५१)

''इस तरह ईश्वर भक्ति में लगे रहकर बड़े–बड़े ऋषि मुनि या भक्तगण अपने आपको भौतिक कर्मों के फलों से मुक्त कर लेते हैं। इस प्रकार जीवन मरण के चक्र से छूटकर मुक्त पद को प्राप्त होते हैं।''

पाठकगण चकित होंगे कि लगभग ऐसी ही कर्मफल व्यवस्था बुद्ध मानते थे।

देखिये, ***धम्मपद*** :–

१. *सदापुण्य कर्म करो व पाप का त्याग करोः–*

अभित्थरेथ कल्याणे पापा चित्तं निवारये।
दन्धं हि करोतो पुञ्ञं पापस्मिं रमती मनो।।
(धम्मपद पापवग्गो क्रमिक श्लोक ११६)

''पुण्य कर्म करने की शीघ्रता करे। पाप कर्म से चित्त को निवृत्त करें। पुण्य कर्म करने में आलस्य करने वाले का मन पाप में रमने लगता है।''

२. *वाणिजो व भयं वग्गं अप्पसत्थो महद्धनो।*
विसं जीवितुकामो व पापानि परिवज्जये।।
(श्लोक १२३)

''जैसे जीने की इच्छा करने वाला व्यक्ति विष को त्याग देता है, उसी प्रकार पाप से दूर रहना चाहिये।''

३. *पाप पुण्य उभयत्रः फलतः* –

इध सोचति पेच्च सोचति पापकारी उभयत्थ सोचति।
सो सोचति सो विहञ्ञति दिस्वा कम्म किलिट्ठमत्तनो।।
इध मोदति पेच्च मोदति कतपुञ्ञो उभयत्थ मोदति।
सो मोदति सो मपोदति दिस्वा कम्म विसुद्धिमत्तनो।।
(विनेबा भावे, धम्मपद ४/६,१०)

''पाप कर्म का कर्त्ता लोक परलोक दोनों में शोक करता है। अपना अशुभ कर्म देखकर तपड़पता है, शोक करता है। पुण्यकर्म का कर्त्ता इस लोक में मुदित होकर परलोक में जाकर भी मुदित होता है। अपना पुण्य देखकर मुदित होता है।।''

इससे सिद्ध होता है कि बुद्ध भी आवागमन, लोक परलोक, पुनर्जन्म में विश्वास करते थे पर खेद है कि नवबौद्ध लोग इनमें कुछ श्रद्धा नहीं करते। वे पूर्णरूप से चार्वाक दर्शन का अनुसरण कर रहे हैं।

४. *कर्मफल अपरिहार्य है* –

न अंतलिक्खे न समुद्दमज्झे न पब्बतानं विवरं पविस्स।
न विज्जती सो जगति प्पदेसो यत्र ट्ठितो मुञ्चेय्य पापकम्मा।।
न अंतलिक्खे..... । न विज्जती सो जगति प्पदेसो यत्र ट्ठितं न प्पसहेथ मच्चु।।
(धम्मपद पापवग्गो क्रमिक श्लोक १२७,१२८)

''संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है– न अंतरिक्ष में, न समुद्र में, न पर्वतों में –जिसमें घुसकर पापकर्म और मृत्यु से बचा जा सकता है।''

यहां महाभारत के इस श्लोक का भाव भी ऐसा ही हैः–

नाधर्मः कारणापेक्षी कर्तारमभिमुंचति।
कर्ताखलु यथा कालं ततः समभिपद्यते।।
(महा० शान्ति० अ० २९८)

अधर्म किसी भी कारण की अपेक्षा से कर्ता को नहीं छोड़ता निश्चय रूप से करने वाला समयानुसार किये कर्म के फल को प्राप्त होता है।

निष्कर्षः—

महात्मा बुद्ध की पुण्य पाप पर पूरी श्रद्धा थी। चाहे जहां भी चला जाये, मनुष्य कर्म का फल प्राप्त कर ही लेता हैयउसका कर्म उसे नहीं छोड़ता। साथ ही, जो पुण्यकर्मा है, वो इस लोक व परलोक में भी पुण्यफल प्राप्त करता है। इससे सिद्ध है कि बुद्ध भी पुनर्जन्म, परलोक मानते थेय पर उनके अनुयायी नहीं मानते और वैदिक धर्म का मजाक उड़ाते हैं।

इसलिये, कर्मफल की व्यवस्था अकाट्य हैः—

अवश्यं लभते कर्ता फलं पापस्य कर्मणः।
घोरं पर्य्यागते काले द्रुमः पुष्पमिवार्तपम्।।
(वाल्मी० अरण्य० स० २६)

हे कल्याणी! यदि जो कुछ भी शुभ—अशुभ करता है करने वाला वही अपने किये कर्मों के फल को प्राप्त होता है।

करने वाला अपने पाप कर्मों का फल घोर काल आने पर अवश्य प्राप्त करता है। जैसे मौसम आने पर वृक्ष फूलों को प्राप्त होते हैं। ****************

कोरोना और भारत

कोरोना के पहले का भारत, कोरोना में भारत और कोरोना के बाद का भारत इसका विस्तृत अध्ययन होना चाहिए। देश ने क्या खोया? क्या पाया? इसका लेखा जोखा होना चाहिए। आप कहेंगे खोया तो बहुत है धंधा—रोजगार, अर्थव्यवस्था जिंदगी, स्वास्थ्य आदि पर पाया क्या? यही तो अध्ययन करना है। कोरोना में लॉकडाउन हुआ जिससे हमारी रोज की गतिविधियाँ बाधित हुई हम घर में कैद हुए हमारी अर्थव्यवस्था चरमराई और मजदूर, छोटा दुकानदार, रेहडीवाला, चायवाला, टैक्सी ऑटो, नाई, मोची, खाती यानि हुनर और हाथ का काम करने वाले रोज कमाने खाने वाले सबसे ज्यादा परेशानी में हैं। व्यापार ठप्प, फैक्टरी ठप्प, कारखाने ठप्प, दुकाने बंद आराम में कोई नही फिर भी कोरोना हमें बहुत कुछ दे गया।

- गंगा जमुना जिसको कोई भी सरकार साफ नही कर पाई करोड़ों अरबों खर्च करके भी कोरोना ने कर दिया।
- हवा का प्रदूषण घट गया और क्वालिटी इंडेक्स सुधर गया।
- ओजोन परत का छेद कम हो गया।
- प्रदूषण में काफी कमी आइ।
- श्वाँस सम्बंधी रोगी कम हुए अस्थमा वालों को आराम मिला।
- भारत कोरोना से लड़ने पर अपनी ताकत पर खड़ा हुआ।इतना ही नही अन्य देशों को भी सहायता दी।
- कोरोना महामारी के दौरान भी हमारे किसानो ने उपज कम नही होने दी, पशुपालकों ने दूध कम नही होने दिया, इत्यादि इत्यादि।

अब यह स्टडी का विषय है कि कोरोना बाद का भारत एक महाशक्ति के रूप में खड़ा हो सकता है और विश्व को दिशा दे सकने की स्थिति बन सकती है।क्या कोरोना के इलाज में हमारी चिकित्सा पद्धति कारगर है यह सत्य हमें स्थापित करना है। 135 करोड़ के देश में मृत्यु दर अन्य देशों के मुकाबले कम है यह हमारे चिकित्सकों के लिए, पेरामेडिकल स्टाफ व अन्य कोरोना वारीयर्स के लिए गर्व की बात है। सलाम है उन्हें, उन लोंगो की मेहनत से यह संभव हो पाया। क्या यह बात कम है कि राजस्थान सरकार के भीलवाड़ा मॉडल को WHO ने स्वीकारा है और कोरोना को पछाड़ने के लिए अन्य देशों को लागू करने को कहा है हमारे देश के लिए गर्व की बात है।

हमारे गाँवो की अर्थव्यवस्था काफी व्यवस्थित रही जो विश्व बैंक के लिए अध्ययन का विषय है। हमारे गाँव सरकार पर भार नही बने और महामारी से बचे रहे, यह भी अर्थशास्त्रियों के लिए अध्ययन का विषय है। कोरोना के मध्य हमारी गाँव की गतिविधियाँ व दिनचर्या विश्व का मार्गदर्शन कर सकती है।

निश्चय ही भारत सरकार को एक प्राच्य विद्या मंत्रालय बनाना चाहिए जिसमें हम भारत के विकास का मॉडल हमारा अपना बनाने, हमारी प्राच्यविद्या का अध्ययन व शोध करने,हमारी कृषि व पशु विज्ञान का गहन अध्ययन करने, हमारा वास्तुशिल्प, हमारा अंतरिक्ष विज्ञान क्या नहीं है हमारे पास? अमेरिका भी कोरोना में हमारा काढ़ा पी रहा है। क्या यह पर्याप्त नहीं कि हम आयुर्वेद पर शोध करें? सरकार जितना खर्च करेगी उससे कहीं अधिक स्वास्थ्य बजट बच जाएगा जो हम शिक्षा, बेरोजगारी व ग्राम विकास तथा कृषि पर खर्च कर पाएँगे। हम संकट को अवसर में बदलें, कोरोना को अभिशाप नहीं वरदान के रूप में देखें।

- ✍ डा. गोपाल बाहेती (अजमेर)

२८मई२०२०
'भारत को क्रूर अँग्रेजों
के शासन से आजाद कराने
में अपना योगदान देने वाले'
महान क्रान्तिकारी
वीर सावरकर जी
की जयन्ती पर हार्दिक शुभकामनाएं
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री
8107827572
7665765113
आर्य परिवार संस्था विज्ञाननगर,कोटा